ISSN : 0373-1200

अगस्त 2002

सी. एस. आई. आर. तथा डी. बी. टी. नई दिल्ली के आंशिक अनुदान द्वारा प्रकाशित

मूल्य : 7.00 रु०

अप्रैल 1915 से प्रकाशित हिन्दी की प्रथम विज्ञान पत्रिका

विज्ञान

- सिन्ड्रोम्स : आनुवंशिकीय बीमा
- उपयोगी खुम्ब
- जयपुर का विज्ञान उद्यान
- उद्योग जगत में लेसर
- कैट स्कैन
- डी एन ए पट्टिकाएँ

AT GC TA GC AT CG CG GC TA GC TA TA

PSLV C3 INDIA
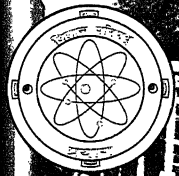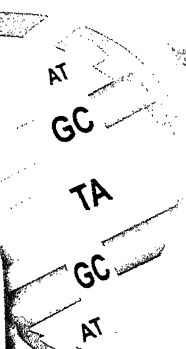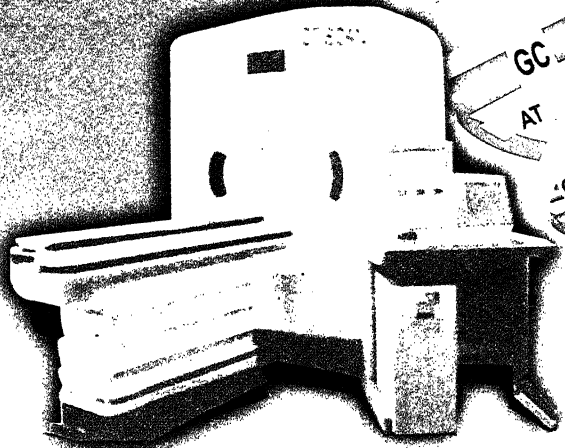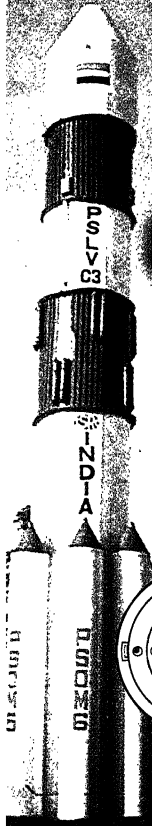
विज्ञान परिषद् प्रयाग

विज्ञान

परिषद् की स्थापना 10 मार्च 1913
विज्ञान का प्रकाशन अप्रैल 1915

वर्ष : 8 अंक : 5
अगस्त 2002

मूल्य
आजीवन व्यक्तिगत : 750 रुपये
आजीवन संस्थागत : 1,500 रुपये
त्रिवार्षिक : 210 रुपये
वार्षिक : 75 रुपये
यह प्रति : 7 रुपये

सभापति
डॉ0 श्रीमती मंजु शर्मा

सम्पादक एवं प्रकाशक
डॉ0 शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री विज्ञान परिषद् प्रयाग

मुद्रक
नागरी प्रेस
91/186, अलोपी बाग, इलाहाबाद
फोन : 502935, 500068

आन्तरिक सज्जा व आवरण
चन्द्रा आर्ट्स
ता0 न0 राय, नया बैरहना, इलाहाबाद
फोन : 558001

कम्प्यूटर कम्पोजिंग
शादाब खालिद

सम्पर्क
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद–211002
फोन : 460001
ई–मेल : vigyan1@sancharnet.in
वेबसाइट : www.webvigyan.com

विषय सूची

डॉ० शम्पा चैटर्जी

बीटी कपास को अब भारत में भी व्यावसायिक तौर पर उगाया जा सकता है। देश में बीटी कपास की खेती को लेकर लंबे समय से विवाद चला आ रहा था। अंततः 26 मार्च 2002 को भारत सरकार की जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रूवल कमेटी (जी ई ए सी) ने एक ऐतिहासिक फैसले में भारत में बीटी कपास की व्यावसायिक खेती की मंजूरी दे दी। इससे देश में कृषि में नई संभावनाओं के द्वार खुल गए हैं।

कपास भारतीय कृषि का सबसे महत्वपूर्ण उत्पाद है। देश में प्राचीन काल से ही कपास की खेती होती आई है। इसके साथ साथ कपास की खेती और इससे जुड़ी अर्थव्यवस्था अनियंत्रित कीटों और रोगों की समस्याओं के कारण लगातार प्रभावित होती आई है। यद्यपि संकर किस्मों ने इस फसल के उत्पादन और प्रतिरोधक क्षमता को कुछ सीमा तक बढ़ाया है, फिर भी कीटों के लगातार बढ़ते प्रकोप की वजह से किसान फसल की बर्बादी और रासायनिक कीटनाशकों पर हो रहे अतिरिक्त खर्च को लगातार झेल रहे हैं। आधुनिक युग में इन समस्याओं से निपटने का एक और हल ढूँढा गया है– जैव प्रौद्योगिकी की बदौलत बेसिलस थूरिंजिएंसिस से प्राप्त 'बीटी' जीन कपास में डालकर उसे परिवर्तित किया गया है।

बी. थूरिंजिएंसिस एक जीवाणु (बैक्टीरिया) है जो प्राकृतिक कीटनाशक की तरह काम करता है। 'बीटी' जीन विषैले प्रोटीन बनाने में सक्षम है जो लेपिडोप्टेरा समूह के कीटों के लिए घातक है। यह विषाक्त प्रोटीन जैसे ही लेपिडोप्टेरा वर्ग के कीट के आहारनाल में पहुँचता है, उसकी शरीर क्रिया डगमगा जाती है और अंततः कीट की मृत्यु हो जाती है।

आनुवांशिक इंजीनियरी द्वारा तैयार नवीन बीटी कपास विश्व भर में खेती के लिए उपयोगी साबित हुई है, क्योंकि यह उच्च उपज देने वाली है, यह बॉलवर्म एवं अन्य विनाशकारी कीटों के लिए प्रतिरोधकता रखती है और इसके उपयोग से रासायनिक कीटनाशकों के खर्च में कमी आती है। विशेष जीवाणु द्वारा तैयार किए जाने वाले बीटी विष का प्रयोग जैव–कीटनाशक के रूप में पिछले 50 वर्षों से किया जा रहा है। जैव प्रौद्योगिकी क्रांति के फलस्वरूप उत्पन्न इन पराजीनी फसलों के पर्यावरण और स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को लेकर अनेक

आशंकाएँ व्यक्त की गईं और बहुत से विवादों ने जन्म लिया है।

बीटी कपास को अमेरिका और आस्ट्रेलिया में विस्तृत क्षेत्रों में उगाया जा रहा है जबकि अन्य देश इस फसल के तकनीकी और व्यावसायिक फायदों को धीरे धीरे पहचान कर इसे अपना रहे हैं। एक तरफ़ जहाँ पराजीनी फसलों की खेती में निहित रासायनिक कीटनाशकों की बचत इसे कृषिविदों और पर्यावरणविदों की दृष्टि में लाभदाई बनाती है, वहीं दूसरी तरफ पर्यावरणवेत्ता इन फसलों के प्रयोग के कारण भविष्य में संभावित पारिस्थितिकीय बदलावों, पर्यावरण प्रदूषण जैसे छिपे खतरों और कीटों में बीटी विष के प्रतिरोधकता विकसित होने की संभावनाओं को लेकर चिंतित हैं।

व्यावसायिक खेती में बीटी कपास का प्रयोग सर्वप्रथम सन् 1996 में अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में प्रारम्भ हुआ। वर्तमान में अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में करीब 20 लाख हेक्टेयर में बीटी कपास उगाई जा रही है। चीन, मेक्सिको तथा दक्षिण अफ्रीका भी अब बीटी कपास की खेती में पीछे नहीं हैं। अन्य देश भी धीरे धीरे बीटी फसलों के फायदों से परिचित हो रहे हैं और दिन प्रतिदिन इसको अपनाते जा रहे हैं। ई पी ए द्वारा प्रमाणित होन के बाद अमेरिका में बीटी फसलें बड़ी तेजी से उगाई गईं परंतु मोन्सेंटो की पराजीनी फसलों को आशातीत सफलता नहीं मिली। किसानों की उम्मीदें शत प्रतिशत कीट मुक्ति पर टिकी थीं जबकि कंपनी ने बीजों की प्रतिरोधक क्षमता को 90–95 प्रतिशत तक बताया था। लेकिन, कपास परामर्शदाताओं ने इस फसल को बॉलवर्म के प्रति 60 प्रतिशत प्रभावी माना है।

भारत में बीटी कपास

माहिको (माहिको हाईब्रीड सीड कंपनी) भारत में पिछले चार वर्षों से पराजीनी कपास के प्रयोगों में जुटी थी। इन परीक्षणों को विशेष अवस्थाओं में संपन्न करने के लिए माहिको को विश्वविद्यालयों द्वारा प्रयोगात्मक भूमि खंड प्रदान किए गए हैं, जिनकी कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों द्वारा गंभीर रूप से निगरानी की जाती है। विभिन्न सरकारी संस्थाओं द्वारा बीटी कपास के क्षेत्र परीक्षणों को मंजूरी दी गई है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा इन फसलों के स्वतंत्र परीक्षण अलग अलग स्थानों पर किए गए। यद्यपि जैव प्रौद्योगिकी विभाग (डीबीटी) बीटी कपास के पक्ष में है तथापि, पर्यावरण सुरक्षा नियमों के तहत कानूनी तौर पर स्थापित की गई संस्था जी ई ए सी (जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रूवल कमेटी) की स्वीकृति जरूरी थी, जो कि अब मिल गई है।

बहुत से भारतीय किसानों ने बीटी कपास बीजों का विरोध भी किया है। उन्होंने इन बीजों को 'संहारक बीज' की संज्ञा दी है। बीटी बीजों के बहिष्कार करने वालों के अनुसार यह 'स्वदेशी' पर सीधा आक्रमण है, क्योंकि विदेशी कंपनियाँ विश्व व्यापार संगठन की

व्यूह रचना के तहत भारतीय किसानों पर विदेशी बीज लादकर उन्हें इन बीजों पर निर्भर बनाना चाहती हैं। विरोधकर्ताओं को उन पराजीनी फसलों का बहिष्कार करने वाले संगठनों का सहयोग भी प्राप्त हुआ जो हमेशा से ही बीटी फसलों के खिलाफ हैं और पर्यावरण के प्रति अतिरिक्त भाव से सचेत थे। कृषक वर्ग जो पराजीनी फसलों के लाभों से परिचित हैं, उन्होंने इस नवीन उपयोगी, मूल्यवान कपास का स्वागत किया। ये किसान बीजों के चयन में किसानों की स्वतंत्रता की दलील भी देते हैं। इन किसानों द्वारा बीटी कपास को उगाने के लिए जल्दी से जल्दी मंजूरी देने की जोरदार वकालत की गई थी। भारत में बीटी कपास संबंधी विवाद जी ई ए सी के गुजरात में कपास की खड़ी फसल जलाने में चौंकाने वाले निर्णय के साथ चरमसीमा पर पहुँच गया था। आवश्यक मंजूरी से पहले ही नवभारत बीज कंपनी द्वारा बीटी कपास बीज (नवभारत 151) गुजरात के किसानों को बेचा गया। तदुपरांत, पराजीनी कपास गुजरात राज्य के 9 जिलों में करीब 11000 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्रफल में गैरकानूनी तरीके से उगाई गई। यह बीटी कपास की फसल काटने के लिए तैयार थी। इसलिए कंपनी के खिलाफ तुरंत कार्यवाही की गई और समस्त फसल जलाने के आदेश दिए गए। केवल कुछ भाग को बचा कर रखा गया, जो केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर को डीएनए के परीक्षणों के लिए सौंपा जाना था।

किसानों को हानि की भरपाई हेतु 5 करोड़ रुपये के खर्च की गणना हुई। अन्य सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ कि इन्हीं बीजों की बिक्री महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश और पंजाब में भी की गई है। इस कंपनी ने इन पराजीनी बीजों को बेचने से पहले किसी भी प्रकार की सरकारी अनुमति लेने की आवश्यकता अनुभव नहीं की। अतः सरकारी संगठनों की तरफ से कड़ी कानूनी कार्यवाही की गई। जब विवाद बढ़ता गया तो सी आई आई (कनफेडरेशन आफ इंडियन इंडस्ट्रीज) जैसी संस्था ने भी इस मामले में हस्तक्षेप किया और स्पष्ट रूप से इस हरकत को नियमों का उल्लंघन बताया।

बीटी कपास के विवाद के कारण जैव प्रौद्योगिक व्यवसाय अत्यधिक प्रभावित हुए हैं। तथापि पराजीनी फसलों का यथोचित मूल्यांकन अति आवश्यक था। साथ ही, जैव प्रौद्योगिकी संबंधित व्यवसाय के लिए उचित नियमों का निर्धारण भी अति महत्वपूर्ण है। अमेरिका सरीखे विकसित देशों के लिए पराजीनी फसलों को लेकर छिड़ा विवाद मूलतः एक पर्यावरण संबंधी विषय है। परंतु भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह पर्यावरण के साथ साथ सामाजिक एवं आर्थिक विषय भी है। कृषि जैव प्रौद्योगिकी में निहित क्षमता इस सहस्राब्दि में क्रांति ला सकती है, परंतु इससे वातावरण एवं स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों की अनदेखी नहीं की जा सकती। कुछ विकासशील देश, जिन्होंने पराजीनी फसलों के लाभों को जाना है, इन फसलों में छिपी आशंकाओं पर गहरी बहस से कतराते हैं। उनको पराजीनी फसलों में ही अपने देश के कृषि संबंधी समस्याओं का समाधान मिलता है।

भारत में क्षेत्र परीक्षणों के परिणामों के बाद अब बीटी कपास को व्यावसायिक तौर पर उगाने की मंजूरी मिलने के साथ ही देश में पराजीनी फसलों के नए युग का शुभारंभ हो गया है। आशा है अब जल्दी ही दूसरी पराजीनी फसलें भी देश की धरती पर लहलहाएँगी।

– साभार

विज्ञान परिवार को स्वतन्त्रता दिवस की शुभकामनाएँ ?

–सम्पादक

• प्रमिला शाह
• नरेन्द्र कुमार

बरसात के मौसम में प्रायः सड़ी गली वनस्पतियों, भीगी पुआल, वृक्षों के तनों व जंगलों में छतरीनुमा आकृतियाँ दिखाई देती हैं। लोग इन्हें अज्ञानतावश 'साँप का छत्ता' भी कहते हैं। वास्तव में ये एक प्रकार की फफूँद हैं, जिसमें पर्णहरित नहीं होता। फलतः ये अपना भोजन स्वयं नहीं बना सकते। ये मृत जैव पदार्थों पर सहजीवी के रूप में उगती हैं।

फफूँद नाम से फसलों में होने वाली बीमारियाँ, त्वचा व सड़े हुए खाद्य पदार्थों के संक्रमण का भाव जगता है लेकिन फफूँद की क्रियाओं का दूसरा पक्ष हमारे लिए अत्यधिक उपयोगी है। फफूँद का जननतंत्र ही खुम्ब है, जिसे ग्रीक, रोमन व भारतीय सभ्यता में भोज्य पदार्थ के रूप में सराहा गया है। उस समय खुम्ब का सेवन उच्चवर्गीय लोगों में प्रचलित था। इसकी शुरुआत सबसे पहले पेरिस में सन् 1650 के आसपास हुई। अब दिनोंदिन खुम्ब की माँग बढ़ती जा रही है। सन् 1970 में हमारे देश में इसकी उपज 100 टन प्रतिवर्ष थी, जो अब लगभग 40,000 टन प्रतिवर्ष है जो पाश्चात्य देशों की तुलना में अभी भी बहुत कम है।

खुम्ब की बढ़ती हुई माँग को देखते हुए प्रश्न उठता है कि क्या इसका सेवन हितकर है ?इनमें कौन से ऐसे गुण हैं जिससे लोगों का खुम्ब के प्रति आकर्षण बढ़ रहा है ?

वर्तमान में पूरे विश्व की तुलना में हमारे देश में प्रोटीन का चलन सबसे कम है। बढ़ती हुई आबादी के साथ साथ प्रोटीन की कमी की समस्या भी बढ़ती जा रही है। जन्तु प्रोटीन आम आदमी को उपलब्ध नहीं हो सकता जिसका कारण है गरीबी व प्रोटीन की कमी। ऐसी स्थिति में यह अत्यधिक आवश्यक है कि ऐसे स्रोतों की खोज की जाए एवं उनके उत्पादन को बढ़ावा दिया जाए जिनमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। सौभाग्यवश खुम्ब की खेती प्रोटीन की कमी दूर करने का सबसे सुलभ साधन है।

पौष्टिकता का स्रोत

खुम्ब आवश्यक पोषक तत्वों का एक अच्छा एवं उत्तम स्रोत है। इसमें शरीर के लिए आवश्यक सभी तत्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। पौष्टिकता की दृष्टि से यह एक अनूठा खाद्य पदार्थ है, जिसका भोजन के रूप में प्रयोग आदिकाल से प्रचलित है।
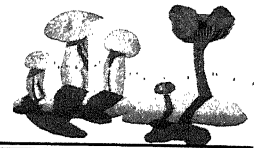
हमारे देश की 80 प्रतिशत जनता शाकाहारी है, जिनके लिए प्रोटीन का स्रोत दाल व अनाज है। इस विशाल जनसमूह की जरूरत की पूर्ति के लिए दाल एवं अनाज से प्राप्त प्रोटीन पर्याप्त नहीं है। यही कारण है कि लोग कुपोषण के शिकार होते जा रहे हैं। प्रोटीन के स्रोत के रूप में खुम्ब का विशेष महत्व है। इससे प्राप्त प्रोटीन में शरीर के लिए आवश्यक सभी नौ ऐमीनो अम्ल होते हैं, जो साधारणतया सब्जियों में नहीं होते। खुम्ब में पाए जाने वाले ऐमीनो अम्लों को सारणी–1 में दर्शाया गया है।

खुम्ब से मिलने वाला प्रोटीन उच्च कोटि का होता है। इसकी पचनीयता जन्तु प्रोटीन से अधिक है(72–83 प्रतिशत)। वनस्पति प्रोटीन में साधारणतया लायसिन एवं ट्रिप्टोफैन नहीं पाए जाते जो कि खुम्ब में पाए जाते हैं।

खुम्ब में विटामिन 'बी' व 'सी' प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। विटामिन का काम जैव रासायनिक क्रियाओं को उत्प्रेरित करना है। भोज्य पदार्थों में विटामिन का होना अत्यधिक आवश्यक है। इसमें फोलिक अम्ल व विटामिन 'बी'12 भी पाया जाता है जो सब्जियों में साधारणतया नहीं पाया जाता। इसके अतिरिक्त खुम्ब में थाइमिन, राइबोफ्लेविन, नायसिन, पेन्टोथैनिक अम्ल व बायोटिन उचित मात्रा में विद्यमान रहते हैं। इसमें पाए जाने वाले पौष्टिक तथ्वों का वर्णन सारणी–2 में किया गया है।

शरीर के विभिन्न क्रियाकलापों के लिए प्रोटीन तथा विटामिन के अतिरिक्त खनिज लवणों का अत्यधिक महत्व है। इनकी कमी से शरीर में विभिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न होने की सम्भावना बढ़ जाती है। खुम्ब में सोडियम, पोटैशियम, फास्फोरस, कैल्सियम, लोहा, ताँबा उपयुक्त मात्रा में पाए जाते हैं (सारणी–3)।

किसी भी जीव को अपनी जैविक क्रियाओं के संचालन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा शरीर को ऊर्जायुक्त पदार्थों के जैवरासायनिक आक्सीकरण के फलस्वरूप मिलती है। सबसे महत्वपूर्ण ऊर्जायुक्त पदार्थ कार्बोहाइड्रेट हैं। खुम्बों में 2–4 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट रहते हैं। खुम्ब के सेवन से सभी पोषक तत्वों के साथ साथ ऊर्जा भी मिलती है जिससे हमारे शरीर में जैविक क्रियाओं का संचालन सुचारु रूप से हो सकता है।

औषधीय गुण

भारतीय औषधि पद्धति के अनुसार महावैद्य चरक तथा सुश्रुत ने चरक संहिता व सुश्रुत संहिता में खुम्ब के औषधीय प्रकारों का भी वर्णन किया है। पहले खुम्ब की पौष्टिकता की अपेक्षा इसके औषधीय गुणों के आधार पर ही मान्यता दी गई थी।

खुम्ब का सेवन कई प्रकार की बीमारियों का उत्तम निदान है। मुख्यतः हृदय रोग, बच्चों का सूखा रोग, चर्म रोग, बेरी बेरी तथा मधुमेह के रोगियों के लिए खुम्ब का सेवन रामबाण सिद्ध हुआ है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए, कम उष्मीयन, कम संतृप्त वसा और कम कोलेस्टेराल वाले आहार के प्रति सजग रहने वाले लोगों का खुम्ब के प्रति आकर्षण स्वाभाविक है।

कम उष्मीयन, अधिक प्रोटीन व रेशे, शर्करा का अभाव तथा सोडियम : पोटैशियन का अनुपात इकाई से अधिक होने

सारणी–1
खुम्ब में पाए जाने वाले आवश्यक ऐमीनो अम्ल (मि.ग्रा./100 ग्राम प्रोटीन)

क्र.सं.	ऐमीनो अम्ल	प्लूरोट्स प्रजाति	एगेरिकस बाइस्पोरस (बटन खुम्ब)
1	ल्यूसिन	6.7	7.5
2	आइसोल्यूसिन	3.9	5.5
3	वैलिन	4.7	5.4
4	ट्रिप्टोफैन	0.9	0.1
5	लायसिन	4.5	6.6
6	हिस्टिडिन	2.2	3.1
7	फिनाइल एलेनिन	2.0	1.7
8	थ्रओनिन	7.1	6.9
9	आर्जिनिन	3.5	4.9
10	मिथिओनिन	1.3	1.4

के कारण खुम्ब मधुमेह तथा ह्रदय रोग से पीड़ित लोगों के लिए एक आदर्श भोजन है। अपने मोटापे से परेशान लोगों के लिए खुम्ब का सेवन वरदान है। इसमें अधिक रेशे व इसकी राख क्षारीय होने के कारण यह कब्ज व एसीडिटी को कम करता है।

कुछ खाद्य खुम्ब जैसे फ्लेमुलीना, वेलुटाइपस, प्लूरोट्स एगेरिकस, लैन्टिनस इडोडस और कौपराइनस कामेट्स जीवाणुरोधी और कवकरोधी गुणों के कारण महत्वपूर्ण हैं। लैंटिनस इडोडस कोलैंटिनान पालीसैकेराइड में कैंसररोधी (ट्यूमररोधी) और रक्त में कोलेस्टेराल घटाने वाले गुण होते हैं (कोलेस्टेरोलेमिक रोधी)। अमेरिका में एड्सरोधी गुणों के कारण ले इंडोडस और मैताके (ग्रिफोला फ्रोन्डोसा) में परीक्षण किए जा रहे हैं जिससे एड्स जैसे भयानक संक्रमण से छुटकारा मिल सके। वैज्ञानिक परीक्षणों द्वारा यह पाया गया है कि प्लूरोट्स साजोर काजू का जलीय सार नैफ्रोन के विकृत होने की क्रिया को कम करता हैं जिससे ऐसे रोगियों का जीवन काल बढ़ जाता है, जिनके गुर्दे में खराबी आ गई हो।

खुम्ब औषधीय गुणों के आधार पर मधुमेह, ह्रदय रोग, उच्च रक्तचाप व कैंसर से पीड़ित लोगों के लिए वरदानस्वरूप है।

खुम्ब द्वारा जैव निम्नीकरण

खुम्ब की उपयोगिता का यह भी एक महत्वपूर्ण पहलू है। प्रकृति में दो प्रकार के वानस्पतिक अपशिष्ट हैं। पहला जंगलों का अपशिष्ट (फॉरेस्ट वेस्ट) तथा दूसरा कृषि अपशिष्ट (एग्रीकल्चर वेस्ट)। दोनों प्रकार के व्यर्थों में लिग्नोसेल्यूलोज होता है। लिग्नोसेल्यूलोज का विघटन आसानी से नहीं होता। लिग्नोसेल्यूलोज को उसके मूल अवयवों में तोड़ने में खुम्ब का बहुत महत्व है। अन्य महत्वपूर्ण उपयोगों के अतिरिक्त लिग्नोसेल्यूलोज को परिवर्तित करके उसे प्रोटीनयुक्त भोजन बनाने में खुम्ब अत्यधिक उपयोगी है।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कृषि अपशिष्ट– जैसे गेहूँ, चावल का भूसा आदि बहुतायत से मिलता है। कभी कभी इसका अधिकांश भाग व्यर्थ चला जाता है या जला दिया जाता है या फिर ऐसे ही पड़े पड़े

सारणी–2
खुम्ब में पौष्टिक तत्व (प्रतिशत में)

क्र.सं.	खुम्ब प्रजाति	पानी	प्रोटीन	वसा	कार्बोहाइड्रेट्स	मिनरल	फाइबर
1	एगेरिकस	90.5	2.9	0.1	4.4	1.2	0.9
2	प्लूरोट्स	90.6	2.7	0.6	4.2	0.9	1.0

सारणी–3
खुम्ब में पाए जाने वाले खनिज लवण (ग्रा./100 ग्राम)

क्र.सं.	खुम्ब प्रजाति	कैल्सियम	मैग्नीशियम	सोडियम	पोटैशियम	आयरन
1	एगेरिकस	0.3142	0.2508	0.0935	3.31	0.1151
2	प्लूरोट्स	0.1603	0.2278	0.0625	3.0	0.0961

खराब हो जाता है जिस कारण पर्यावरण भी दूषित होता है। लिग्नोसेल्यूलोज के कारण यह अपशिष्ट आसानी से विघटित नहीं होता। लिग्नोसेल्यूलोज युक्त अपशिष्ट पर खुम्ब की खेती आसानी से की जा सकती है। इस अपशिष्ट का उपयोग कर पर्यावरण को दूषित होने से बचाने का तथा प्रोटीनयुक्त भोजन उपलब्ध कराने में खुम्ब का विशेष योगदान है।

जुगाली करने वाले जानवर जैसे गाय व भैंस को लिग्निन के कारण लिग्नोसेल्यूलोज युक्त अपशिष्ट को (गेहूँ व चावल का भूसा) पचाने में दिक्कत होती है। खुम्ब की यह विशेषता है कि यह लिग्नोसेल्यूलोज युक्त अपशिष्ट की पाचनशक्ति बढ़ा देता है। ढिंगरी खुम्ब को लिग्नोसेल्यूलोज युक्त अपशिष्ट पर उगाकर उस अपशिष्ट को फसल देने के पश्चात् पशु आहार में मिलाया जा सकता है। इसकी पचास प्रतिशत तक मात्रा चारे में मिलाई जा सकती है। इससे समस्या को हल किया जा सकता है।

रोजगार का सुलभ साधन

खुम्ब उत्पादन रोजगार का सबसे सुलभ साधन है। यह एक ऐसा व्यवसाय है जिससे बेरोजगार युवक एवं किसान बहुत कम खर्चे में आत्मनिर्भर व स्वावलम्बी बन सकते हैं तथा अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार ला सकते हैं।

खुम्ब की बढ़ती हुई माँग किसानों के लिए आमदनी का नया जरिया बन गई है। इसकी खेती कम जगह में, कम लागत से शुरू की जा सकती है। खुम्ब की यह विशेषता है कि यह कृषि अपशिष्ट पर आसानी से उगाया जा सकता है। इस प्रकार इसकी खेती के लिए माध्यम (सब्सट्रेट) का खर्चा बचाया जा सकता है।

उन किसानों के लिए खुम्ब उत्पादन का व्यवसाय अत्यधिक हितकारी है जिनके पास फसल उगाने के लिए जमीन का अभाव है। इसका उत्पादन बन्द कमरों में रैक लगाकर किया जा सकता है। इसकी खेती के लिए उपजाऊ भूमि की आवश्यकता नहीं होती।

खुम्ब उत्पादन का कार्य छोटे आकार के फार्म से शुरू किया जा सकता है। जैसे जैसे इसका कार्य क्षेत्र बढ़ाया मुनाफा भी बढ़ता जाता है।

रक्षा कृषि अनुसंधान प्रयोगशाला
पिथौरागढ़ (उत्तरांचल)

सिन्ड्रोम आनुवांशिकीय बीमारियाँ

• डॉ० सियाराम वर्मा
• डॉ० देवनारायण विश्वकर्मा

यदि मानव शरीर में कोई रोग न हो तो वही सबसे बड़ा सुख है और वास्तविकता भी यही है। वैसे इस भौतिकतावादी युग में विज्ञान डार डार है तो बीमारी पात पात है। हमारे दैनिक जीवन में खान पान तथा वातावरण का बहुत ही प्रभाव पड़ता है। भ्रूण विकास के दौरान आनुवांशिकीय इकाई 'जीन' एवम् इसके वाहक गुणसूत्र पर जैवकोशिका वृद्धि के दौरान किसी भी प्रकार के सूक्ष्म अथवा अतिसूक्ष्म स्थान परिवर्तन या सिन्ड्रोम की उत्पत्ति हो जाती है। जीन (डीएनए का लघु रूप) मनुष्य के विभिन्न गुणों का निर्धारण करता है। सेक्स क्रोमोसोमों (गुणसूत्र) के जरा से स्थान परिवर्तन से नर से नारी का गुण उत्पन्न हो जाता है।

मानव शरीर की उत्पादक (रिप्रोडक्टिव) कोशिकाओं में कुल 46 गुणसूत्र हैं। इनमें से बाइस जोड़े आटोसोम्स एवम् एक जोड़ा सेक्स क्रोमोसोम कहलाता है। इसी सेक्स क्रोमोसोम से मनुष्य में लिंग का निर्धारण होता है। इन सभी गुणसूत्रों को हम 1 से 22 तक की संख्या में नामकरण कर सकते हैं। सूत्री विभाजन अथवा अर्धसूत्री विभाजन के दौरान जब गुणसूत्रों का अलगाव बराबर न होकर यदि कोई जोड़ा गुणसूत्र से अलग होकर फिर से नए गुणसूत्र के साथ जोड़ा बनाता है और इसी प्रकार गुणसूत्रों की संख्या दो तरह की न होकर तीन तरह की हो जाती है जिससे मानसिक कमजोरी, व्यवहार, गुण आदि में दोष उत्पन्न हो जाता है। इन अनियमितताओं के कारण मानव के हावभाव बदल जाते हैं। आनुवांशिक अनियमितताओं के इसी समुच्चय को सिन्ड्रोम (Syndrome) कहा जाता है। यदि सिन्ड्रोम को परिभाषित किया जाए तो सिन्ड्रोम विभिन्न बीमारियों का समूह कहलाता है।

सिन्ड्रोम के प्रकार

सिन्ड्रोम कई प्रकार के होते हैं। कुछ प्रमुख प्रकार के निम्नवत् हैं :

1. डाउन सिन्ड्रोम : (गुणसूत्रांक 47+21) कहने का तात्पर्य उत्पन्न सन्तति में 46 गुणसूत्र की जगह 47 गुणसूत्र हो जाते हैं यानी 21वें गुणसूत्र से एक अतिरिक्त गुणसूत्र जुड़ जाता है। यह गुणसूत्र से सम्बन्धित एक बहुचर्चित बीमारी को जन्म देता है। इसे पश्चिम में **मंगोलिज्म** नाम से जाना जाता है। इस बीमारी का पता लांगडाउन ने 1866 में लगाया था। यह एक आनुवांशिक बीमारी है। डाउन सिन्ड्रोम से ग्रसित बच्चे प्रायः बौने, आँखें बादामी, मुखमण्डल तिरछा, सुग्राही (सेन्सेटिव), प्रसन्न एवम् प्रेमी होते हैं। इनकी हथेलियों में स्पष्ट मोटी सिकुड़नें (जैसी कि लंगूर के हाथ में पाई जाती हैं) दिखाई पड़ती हैं। साधारणतः इनका चेहरा गोल, चौड़ा, छोटा माथा, चौड़ी चिपटी नाक और बेडौल दाँत व जीभ लम्बी होती है। इनकी एड़ियाँ ढीले जोड़ों के कारण सामान्य बच्चों से अलग पहचान बनाती हैं। इनका दिमागी स्तर कमजोर होता है। फिर भी इन्हें नित्य प्रति प्रशिक्षण दिया जाए तो ये यान्त्रिक कार्य बड़ी चतुराई से कर लेते हैं।

यह आनुवांशिकी सिन्ड्रोम प्रत्येक 1000 की

जनसंख्या में कुल 7.3 प्रतिशत पाया जाता है। वास्तव में इस बीमारी का जन्म बार बार गर्भ समापन की स्थिति में होता है।

2. ट्राइजोमी सिन्ड्रोम 13 : (गुणसूत्रांक 47+13) इस प्रकार की अनियमितताओं में मानव शरीर के 13वें गुणसूत्र में एक अतिरिक्त क्रोमोसोम जुड़ जाता है। इस प्रकार के बच्चे दिमागी रूप से कमजोर तथा बहरे होते हैं। इनके शरीर में सूक्ष्म मांसल उभार, होठ या तालू दरारयुक्त, हृदय से सम्बन्धित बीमारी, एड़ी का पिछला भाग उभरा हुआ होता है। इनके हाथ पैरों में पाँच से ज्यादा अंगुलियाँ जाई जाती हैं। प्रत्येक 20,000 की जनसंख्या में इस प्रकार के अनियमित बच्चों की संख्या 1 आँकी गई है। इस प्रकार के बच्चे जन्म लेने के बाद तीसरे महीने के मध्य मर जाते हैं। कभी कभी कुछ बच्चे पाँच महीने तक भी जीवित रह सकते हैं।

3. ट्राईजोमी सिन्ड्रोम 18 : (गुणसूत्रांक 47+18) इसमें अट्‌ठारहवें गुणसूत्र में दो सामान्य प्रकार के गुणसूत्रों की जगह 3 प्रकार के गुणसूत्र जुड़ जाते हैं। इस प्रकार की स्थिति द्वितीयक अर्धसूत्री विभाजन के उपरान्त ही उत्पन्न होती है। इस प्रकार के बच्चों में मानसिक कमजोरी के साथ बहुसंक्रमित विकृतियाँ पाई जाती हैं। इस प्रकार के बच्चे आरम्भ की अवस्था में ही लगभग जन्म के छः मास के बाद ही मर जाते हैं जिनकी संख्या 90 प्रतिशत होती है। इस प्रकार के बच्चे 8000 में 1 पाए जाते हैं। इस प्रकार की विकृति वृद्धावस्था में जन्मे बच्चों में ज्यादातर पाई जाती है।

4. क्राई डूचाट सिन्ड्रोम : इसमें पाँचवाँ गुणसूत्र विकृत होता है। इस प्रकार के बच्चे जन्म लेने के बाद बिल्लियों की तरह रोते हैं। इस प्रकार का सिन्ड्रोम मानसिक बीमारी को भी जन्म देता है।

5. इरीटेबिल बाउल सिन्ड्रोम : इसका मुख्य कारण मानसिक तनाव होता है। मानसिक तनाव होने पर मस्तिष्क में उपस्थित इमोशनल नर्वस सिस्टम प्रभावित होता है जिससे एन्जाइम कम बनने लगते हैं। पेट में आने वाली किसी चीज को पचाने के लिए यही एन्जाइम दावेदार होते हैं। जब पाचन सही नहीं होता है तो पेट में कई प्रकार की खराबियाँ आ जाती हैं। वास्तव में देखा जाए तो मस्तिष्क में सेन्ट्रल नर्वस सिस्टम से जुड़ी आँतों का भी अपना एन्टिक नर्वस सिस्टम होता है। इस प्रकार जैसे ही कोई मानसिक तनाव होता है तो सेन्ट्रल नर्वस सिस्टम प्रभावित होता है और फिर वहाँ से रेशों के रूप में संरचनाएँ आँतों के नर्वस सिस्टम पर आती हैं। मानसिक तनाव से शरीर की प्रतिरोधक क्षमता भी प्रभावित होती है। इसलिए पेट के मरीजों को यह भी देखना चाहिए कि कहीं वे तनाव में तो नहीं हैं। इरिटेबुल बाउल सिन्ड्रोम से शहरी क्षेत्रों में लगभग 80 प्रतिशत और गाँवों में करीब 30 से 40 प्रतिशत लोग प्रभावित रहते हैं।

6. नेफ्रोटिक सिन्ड्रोम : यह गुर्दे की बीमारी से उत्पन्न लक्षणों का संग्राहक है। इसमें प्रोटीन तत्व जो अन्य उपयोगी कामों के अतिरिक्त शरीर में पानी का बाँध भी बनाता है, को गुर्दा द्वारा रोका नहीं जा सकता है और मूत्र संस्थान द्वारा शरीर के बाहर फेंक दिया जाता है। इस प्रकार गुर्दे द्वारा अपनी सक्रिय अवस्था में शरीर के उपयोगी तत्वों को संरक्षित करने की शक्ति का क्षय अन्य श्रृंखला प्रक्रियाओं को जन्म देता है। लगातार मूत्र द्वारा शरीर से प्रोटीन का स्तर एक निश्चित सीमा से कम हो जाता है तो शरीर में पानी का बाँध टूट जाता है और वह पानी शरीर के विभिन्न ऊतकों में इकट्‌ठा होने लगता है जिससे सूजन आ जाती है। यह सूजन पहले चेहरे पर और आँख के आसपास प्रकट होती है। कालान्तर में पैरों, हाथों और पेट पर सूजन रहने लगती है। इस बीमारी से उच्च रक्तचाप भी हो सकता है। कोलेस्टेराल की मात्रा भी बढ़ सकती है। इस रोग में माता पिता का सहयोग अत्यन्त आवश्यक होता है।

7. माइक्रोसिफैली सिन्ड्रोम : इस प्रकार के बच्चों का सिर काफी छोटे आकार का और पतला होता है। उसका आकार त्रिकोण जैसा होता है। जब बालक गर्भ में रहता है तो पाँचवें महीने में उसका मानसिक विकास अवरुद्ध होने लगता है।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

कैट स्कैन क्या और क्यों?

• राकेश पाठक

आधुनिक युग में विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में हुई प्रगति ने एसे अनेक रोगों का निदान व उपचार सहज सुलभ कर दिया है, जो कभी लाइलाज समझे जाते थे। पिछले कुछ समय में विकसित यंत्रों ने हृदय एवं मस्तिष्क की क्रियाविधि, तंत्रिका तंत्र के अध्ययन तथा इससे सम्बन्धित विभिन्न रोगों जैसे दिमागी असंतुलन, मिर्गी का दौरा, चोट व हृदय रोगों के उपचार के क्षेत्र में संभावनाओं के नए द्वार खोल दिए हैं।

जब मानव शरीर या इसका कोई अंग किसी रोग के कारण सही ढंग से कार्य नहीं कर पाता है तब चिकित्सक इसके कारण को जानने के लिए वर्षों से एक्स–रे अथवा फ्लुरोस्कोपी की सहायता लेते रहे हैं।

परन्तु एक्स–रे तकनीक की कुछ सीमाएँ हैं और एक्स–रे मशीनों से उतारे गए चित्रों में कुछ त्रुटियाँ सर्वथा बनी रहती हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा प्राप्त मानव शरीर के चित्र इतने स्तरीय नहीं होते थे जिससे चिकित्सक रोग की तह में पहुँच कर, रोग का निदान आसानी से कर सकें, क्योंकि आम एक्स–रे दो आयामी होते थे। अतः इनमें गहराई एवं मोटाई का अनुमान लगाना मुश्किल होता है। इस समस्या के कारण चिकित्सकों को कई बार किसी एक ही भाग के अलग अलग कोणों से कई एक्स–रे खींचने पड़ते हैं। जैसे छाती के एक्स–रे में यदि कोई गाँठनुमा छाया दिखाई देती है तो निश्चित कर पाना कठिन होता है कि वह छाती के अगले हिस्से में है या पिछले हिस्से में है या बीच के हिस्से में है और जब तक यह तय नहीं हो पाता तब तक उस गाँठनुमा छाया की पहचान करना भी संभव नहीं होता। इसी प्रकार आम एक्स–रे से समान घनत्व वाले अंगों में विभेद करना संभव नहीं हो पाता है।

इन समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए ब्रिटेन के इलेक्ट्रॉनिक इंजीनियर डॉ0 हाउसफील्ड ने वर्षों प्रयोग किए और अन्ततः अमेरिका के भौतिकविद् डॉ0 कारमेक के सहयोग से 1972 में एक विलक्षण और उल्लेखनीय यंत्र **कैट स्कैन** का आविष्कार किया।
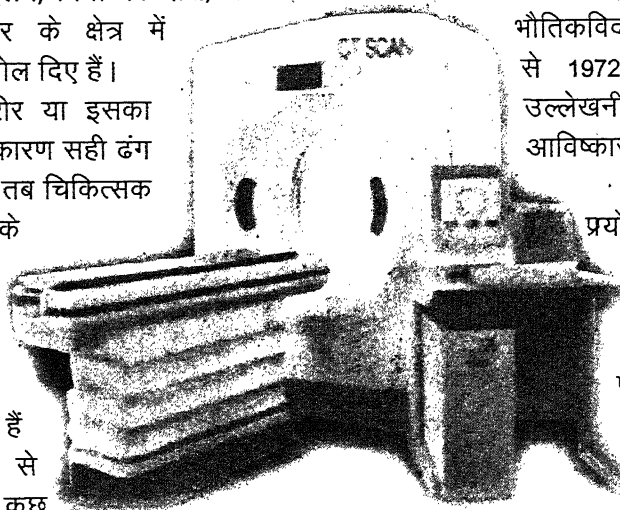
डॉ0 हाउसफील्ड ने अपने प्रयोगों से यह जान लिया कि शरीर का कौन सा ऊतक कितना सघन होता है और वहाँ एक्स–रे गुजरने पर कितना क्षीण होता है। इस जानकारी को उन्होंने एक फार्मूले के रूप में व्यक्त किया जो हाउसफील्ड वेल्यू कहलाया। सामान्य ऊतकों के रोगग्रस्त होने पर हाउसफील्ड वेल्यू परिवर्तित हो जाती है और इससे रोग की प्रकृति का अनुमान लगाया जा सकता है। उन्होंने इस जानकारी को एक कम्प्यूटर में फीड किया तथा उस कम्प्यूटर को अति सूक्ष्म सूचक उपकरणों और शक्तिशाली एक्स–रे ट्यूब से जोड़ दिया।

एक्स–रे और कम्प्यूटर का यह अभिरूप **कैट स्कैनर यंत्र** कहलाया और इस महान आविष्कार के लिए उन्हें नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

वास्तव में कैट स्कैनर आम एक्स–रे का ही एक अत्यन्त विकसित रूप है और इसके द्वारा शरीर

के किसी भी भाग का चित्रण किया जा सकता है।

कैट स्कैनर यंत्र की विशेषता यह है कि यह वीडियो मॉनीटर या टी0वी0 स्क्रीन पर तीन आयामी चित्र देने में सक्षम होता है। साथ साथ इससे प्राप्त चित्रों में विभिन्न प्रकार के ऊतकों की पहचान करने में कोई दिक्कत नहीं आती।

प्रारम्भ में इस यंत्र को विशेष रूप से तंत्रिका तंत्र सम्बन्धी व्याधियों को खोजने के लिए बनाया गया किन्तु क्रमशः अनेक विकासों के फलस्वरूप विभिन्न प्रकार के ऊतकों में भेद करने में सफलता प्राप्त हुई। इसके साथ ही सामान्य और स्कंदित रक्त में अन्तर भी स्पष्ट हुआ।

इसकी सहायता से रेडियोलॉजिस्ट, मस्तिष्क गुहा और सेरेब्रो–स्पाइनल द्रव्य का चित्रण किया जा सकता है। विभिन्न प्रकार के रोगों के निदान में इस यंत्र की उपयोगिता बहुमुखी है।

उदर, छाती एवं गर्दन के रोगों की पहचान इस यंत्र के द्वारा की जा सकती है। चोट, गाँठ व इन्फेक्शन जैसे विकारों का उपचार इससे बेहद आसान हो गया है। कैट स्कैनर के द्वारा कैन्सर की पहचान अब सहज है। इस यंत्र के द्वारा कैन्सर की अवस्था तथा उपचार की पद्धति का पता लगाया जा सकता है, साथ साथ यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि प्रयोग में लाई गई उपचार पद्धति से रोगी को कितना लाभ पहुँच रहा है।

कैट स्कैनर दुर्घटनाग्रस्त लोगों की सिर की चोट के तमाम मरीजों को नया जीवन प्रदान करने में मुख्य भूमिका का निर्वाह कर रहा है। मस्तिष्क की गाँठ, टी0बी0, धमनियों के विकारों तथा संक्रामक रोगों की पहचान में भी यह यंत्र बेहद लाभकारी सिद्ध हुआ है।

इस यंत्र के द्वारा यह पता लगाना सहज हो गया है कि मस्तिष्क में कहाँ व कौन सी हड्डी टूटी है, कौन सी नस फट गई है या कहीं खून का जमाव या रिसाव तो नहीं हो रहा है। फलस्वरूप यह निर्णय लेने में आसानी रहती है कि रोगी के लिए आपरेशन आवश्यक है अथवा नहीं। इसी प्रकार मिरगी के मरीजों में भी दौरों के कारण जानने के लिए आवश्यक हो गया है।

इन सब लाभों के बावजूद इसके कुछ नुकसान भी हैं। इसके द्वारा सबसे बड़ा खतरा शरीर पर पड़ने वाले विकिरण का है। एक कैट स्कैन में एक्स–रे की तुलना में 12 से 30 गुना अधिक विकिरण होता है जिससे शरीर पर दुष्प्रभाव पड़ता है, अतः इसका उपयोग बेहद आवश्यक होने पर तथा सार्थक स्थितियों में करना श्रेयस्कर है।

ई–416, हुडको कॉलोनी
कमला नेहरू नगर
जोधपुर (राजस्थान)

सिन्ड्रोम (पृष्ठ 9 का शेष)

8. हाइड्रोसिफैली सिन्ड्रोम : मानसिक दुर्बलता के शिकार हाइड्रोसिफैली वाले बालक भी हुआ करते हैं। इनके सिर का आकार अपेक्षाकृत काफी बढ़ जाता है। सिर की परिधि 28 इंच तक बढ़ सकती है। सिर की अपेक्षा चेहरा छोटा दिखाई पड़ता है। बीमारी के कारण रिब्रोस्पाइनल द्रव की मात्रा जितनी होनी चाहिए उससे अधिक बढ़ जाती है।

उपर्युक्त सभी बीमारियों का प्रमुख कारण वंशानुक्रम है। ब्रीज राबिन्सन ने अपने अध्ययनों के निष्कर्षों के आधार पर बताया है कि पारिवारिक निर्धनता, आवश्यक सुविधाओं की अनुपलब्धि, शिक्षा पर ध्यान न देना, माता या पिता की अनुपस्थिति, अभिप्रेरणा की कमी, अनावश्यक चीजों की मौजूदगी आदि ऐसे कारण हैं जो बालकों की मानसिक दुर्बलता के लिए उत्तरदायी होते हैं।

आनुवांशिकीय एवं पादप प्रजनन विभाग
नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, फैजाबाद

राज्य चिन्ह एवं वन्य जीव

• सतीश कुमार वर्मा
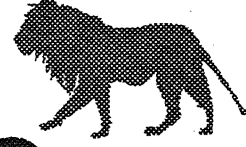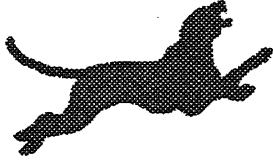
भारतीय वन्यजीव बोर्ड की संस्तुति पर भारत सरकार ने सिंह (Lion) को भारत का राष्ट्रीय पशु, मोर को राष्ट्रीय पक्षी, बरगद को राष्ट्रीय वृक्ष एवं कमल को राष्ट्रीय कुसुम घोषित किया। बाद में बोर्ड के सुझाव पर सिंह के स्थान पर बाघ (Tiger) को भारत का राष्ट्रीय पशु घोषित कर दिया गया। भारतीय वन्यजीव बोर्ड ने आगे चलकर यह भी सुझाव दिया कि भारत का प्रत्येक राज्य भी अपना पशु, राज्य पक्षी, राज्य पुष्प एवं राज्य वृक्ष का चयन करे ताकि वन्यजीवों के संरक्षण–संवर्धन हेतु व्यापक जन चेतना का प्रचार–प्रसार हो। राष्ट्रीय वन्यजीव कार्य योजना के ऐजेन्डा नम्बर 6 के प्रावधानों की पालना में 1983–84 से विभिन्न राज्यों ने अपने–अपने प्रान्त के वन्य जीव सलाहकार बोर्डो के परामर्श से राज्य चिन्हों (Icons) के रूप में वन्य प्राणी एवं वन्य वनस्पतियों को चिन्हित करना प्रारम्भ किर दिया।

वन्य जीव (सुरक्षा) अधिनियम 1972 के अनुसार अकृष्य वनस्पतियों एवं अपालतू प्राणी संयुक्त रूप से वन्यजीव (Wildlife) कहलाते हैं। वस्तुतः राज्य चिन्हों में वन्यजीवों को स्थान देकर केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों की मंशा व्यापक जनचेतना लाकर प्रकृति के महत्वपूर्ण घटक वन्य प्राणियों एवं वनस्पतियों का व्यापक संरक्षण–संवर्धन करना रहा है, जो स्वयं मनुष्य के व्यापक हित में भी है।

राज्य चिन्हों में रूप में अपनाए गए वन्य जीव

देश के विभिन्न राज्यों ने अपने अपने राज्य पशु, पक्षी, पुष्प एवं वृक्षों की घोषण कर दी है। कुछ राज्य अभी भी ऐसी घोषणा नहीं कर पाए हैं। विभिन्न राज्यों के वे वन्यजीव जो राज्य चिन्हों में अपनाए गए हैं, सारणी–1 में प्रदर्शित किए गए हैं।

लक्षद्वीप को छोड़ सभी राज्यों ने स्तनधारियों को ही अपना राज्य पशु घोषित किया है, जबकि लक्षद्वीप ने एक मछली को यह सम्मान दिया है।

अभी तक 28 राज्यों/केन्द्र प्रशासित प्रदेशों ने राज्य पशु एवं राज्य पक्षियों की घोषणा की है : 25 ने राज्य वृक्षों की एवं 21 ने राज्य पुष्पों की घोषणा की है। असम, पाण्डीचेरी, दिल्ली, अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह, चण्डीगढ़, दादर एवं नागर हवेली, दमण एवं दीव तथा लक्षद्वीव ही ऐसे राज्य/केन्द्र प्रशासित प्रदेश हैं जिन्होंने अभी तक किसी भी वानस्पतिक एवं प्राणिक राज्य चिन्ह की घोषणा नहीं की है।

राज्य चिन्हों के रूप में वानस्पतिक एवं प्राणिक प्रजातियों को मान्यता देना प्रकृति संरक्षण एवं पर्यावरण संतुलन के लिए व्यापक जन चेतना लाने का एक अच्छा प्रयास है। इन चिन्हों की घोषणा में निहित भावना का हम सभी को पूरा आदर करना चाहिए तथा सामूहिक प्रयास द्वारा संस्कृति संरक्षण के कार्यो में सहयोग प्रदान कर सहभागिता निभानी चाहिए। राज्य पशु, पक्षी, वृक्ष एवं पुष्प के रूप में चार जातियों की घोषणा का तात्पर्य यह नहीं है कि हर राज्य में केवल चार जातियों को ही बचाया जाए बल्कि यह सांकेतिक सम्मान वस्तुतः चार जातियों को देकर भी सम्बन्धित राज्यों के सभी प्राणियों एवं वनस्पतियों को संरक्षण–संवर्धन का संदेश देता है।

सारणी

राज्य का नाम	राज्य पशु	राज्य पक्षी	राज्य वृक्ष	राज्य पुष्प
आन्ध्र प्रदेश	काला हिरण	नीलकंठ	नीम	–
अरुणाचल प्रदेश	मिथुन	ग्रेट हार्न बिल	डिप्टैरोकार्पस मैक्रोकार्पस	लेडी स्लीपर आर्किड
बिहार	गौर (इंडियन बाइसन)	नीलकंठ	पीपल	कचनार
छत्तीसगढ़	जंगली भैंस	पहाड़ी मैना	–	–
गोवा	गौर (इंडियन बाइसन)	ब्लैक क्रस्टेड बुलबुल	टर्मीनेलिया टोमनटोसा (सादड़)	–
गुजरात	सिंह	हंसावर (ग्रेटर फ्लेमिंगो)	–	–
हरियाणा	काला हिरण	काला तीतर	पीपल	कमल
हिमाचल प्रदेश	कस्तूरी मृग	हिमालयी मोनल	देवदार	रोडोडेन्ड्रान
जम्मू एवं कश्मीर	हंगुल	काली गर्दन की सारस	चिनार	कमल
झारखंड	हाथी	कोयल	साल	पलाश
कर्नाटक	हाथी	नीलकंठ	चन्दन	कमल
केरल	हाथी	ग्रेट हार्नबिल	नारियल	अमलताश
मध्य प्रदेश	बारासिंगा	पैराडाइस	फ्लाईकैचर	– –
महाराष्ट्र	भारतीय बड़ी गिलहरी	हरा इंपीरियल कबूतर	आम	लैगरस्ट्रोमिया स्पिशियोसा
मणिपुर	संगाई	श्रीमती ह्यूम फीजेन्ट	तून	शिरहॉय लिली
मेघालय	बादली चीता	पहाड़ी मैना	हवन (गमार)	लेडी स्लीपर आर्किड
मिजोरम	हुलूक गिब्बन	श्रीमती ह्यूम फीजेन्ट	मेसुआ फेरिया	लाल वेन्डा
नागालैण्ड	मिथुन	ब्लीथ ट्रेगोपान	एल्डर	रोडोडेन्ड्रान
उड़ीसा	हाथी	मोर	बरगद	कमल
पंजाब	काला हिरण	उत्तरी गोशाक (बाज)	शीशम	–
राजस्थान	चिंकारा	गोडावण	खेजडी	रोहिडा
सिक्किम	लाल पान्डा	ब्लड फीजेन्ट	रोडोडेन्ड्रान	नोबिल आर्किड
तमिलनाडु	नीलगिरी	एमरैल्ड फाख्ता	पामीरा पाम	ग्लौरीओसा सुपरबा
त्रिपुरा	फायरी लंगूर	हरा इंपीरियल कबूतर	अगर	मेसुआ फेरिया
उत्तरांचल	कस्तूरी मृग	हिमालयी मोनल	रोडोडेन्ड्रान	ब्रह्म कमल
उत्तर प्रदेश	स्वाम्प मृग	सारस क्रेन	अशोक	ब्रह्म कमल
पश्चिमी बंगाल	मछुआ बिल्ली	श्वेत वक्ष किलकिला	छातिन	हरसिंगार
लक्षद्वीप	बटरफ्लाई मछली	शूटी टर्न	आर्टोकार्पस कम्यूनिस	–

– फुलवारी वन्य जीव अभयारण्य, कोटडा
उदयपुर, राजस्थान

सराहनीय आविष्कारों के लिए एन आर डी सी के प्रौद्योगिकी दिवस (2002) पुरस्कार

● राधाकांत अंथवाल

माननीय श्री कृष्ण चंद्र पंत, उपाध्यक्ष, योजना आयोग द्वारा राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस (11 मई) 2002 के अवसर पर नई दिल्ली में आयोजित एक समारोह में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग (विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय) की ओर से नेशनल रिसर्च डेवलपमेंट कारपोरेशन (एनआरडीसी) द्वारा प्रदत्त प्रौद्योगिकी दिवस पुरस्कार प्रदान किए गए।

इस अवसर पर विज्ञान व प्रौद्योगिकी राज्य मंत्री श्री बची सिंह रावत, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग के सचिव व वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के महानिदेशक डॉ. आर. ए. माशेलकर, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के सचिव प्रो. एस. राममूर्ति, जैव प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव डॉ. मंजु शर्मा, महासागर विकास विभाग के सचिव डॉ. हर्ष के. गुप्ता, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के संयुक्त सचिव श्री अमिताभ पांडे और एनआरडीसी के प्रबंध निदेशक श्री एन.के. शर्मा भी उपस्थित थे।

इस वर्ष जैव प्रौद्योगिकी, विद्युत, इलेक्ट्रॉनिकी, यांत्रिकी तथा धातुकर्म के क्षेत्र से जुड़े राष्ट्रीय महत्व के कुल 7 आविष्कारों को पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर वर्ष 2001 के लिए घोषित वाइपो स्वर्ण पदक भी प्रदान किए गए।

शेप मेमोरी एलॉय (एसएमए) एक्चुएटेड स्टेप्पर ड्राइव मैकेनिज्म अर्थात् अपनी मूल आकृति याद रखने वाली मिश्रधातु प्रवर्तक कृत्रिम चालन यंत्रावलि के विकास के लिए बंगलौर स्थित भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के उपग्रह केन्द्र के सर्वश्री एन विश्वानाथा, टी.पी. मुराली, एम.के. रविन्द्रन, टी.एस. सिमिल और एन. प्रसाद को संयुक्त रूप से 60,000 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया। भारतीय उपग्रह इनसैट–2 ई में शेप मेमोरी एलॉय आधारित, देश में ही विकसित दो सोलर फ्लैप ड्राइव यंत्रावलियों का उपयोग किया गया है, जो कि संतोषजनक ढंग से काम कर रही हैं।

बना बनाया लॉन कोकोलॉन के डिजाइन एवं विकास के लिए कॅयर बोर्ड, कोचि, केरल के श्री किस्ट्री फर्नांडीज, डॉ. उमा शंकर शर्मा और श्री के.पी. सोमन्थन को संयुक्त रूप से 40,000 रुपये का पुरस्कार दिया गया। कोकोलॉन एक पर्यावरणसम्मत लॉन है, जिसे बनाने में प्राकृतिक कॅयर उत्पादों का इस्तेमाल किया जाता है। इस नए प्रकार के लॉन में मिट्टी का इस्तेमाल नहीं होता और न ही नाशीजीवियों यानी पेस्टीसाइडों का। इस लॉन को लपेटा अर्थात् रोल किया जा सकता है और इधर उधर ले जाया जा सकता है। इस लॉन को बालकनी, छत या किसी अन्य जगह बिछाया जा सकता है।

पादप ऊतक संवर्धन हेतु एक उपकरण के विकास के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) खड़गपुर के डॉ. पी. एस. भट्टाचार्य, डॉ. बी. सी. भट्टाचार्य और डॉ. सत्यहरि डे को 40,000 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया। इस उपकरण के उपयोग से ऊतक संवर्धन माध्यम की लागत में 75 प्रतिशत तक की बचत होती है और ऐगार–संपूरित माध्यम के मुकाबले इसमें वृद्धि दर काफी तेज पाई गई है। इसके उपयोग से इस काम में लगे आदमियों की संख्या में कमी आती है और साथ में लगी ट्यूब के जरिए संवर्ध (कल्चर) के बदलाव के कारण लगने वाले जैव विकास संबंधी समय में भी बचत होती है। उसमें उप संवर्धन (सब–कल्चर) की आश्यकता न रहने से संदूषण की समस्या न्यूनतम हो जाती है। इस उपकरण के उपयोग में एक फायदा यह भी है कि साथ में लगी ट्यूबों से माध्यम की अवस्थाओं का मॉनीटरन किया जा सकता है।

अनाज और बीजों के सुरक्षित भंडारण हेतु कीड़ों को अपने आप हटाने वाले पात्रों के डिजाइन के लिए तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयंबटूर के प्रो. एस. मोहन को 30,000 रुपये के पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। कीड़ों का इधर उधर जाने का स्वभाव और कीड़ों के हवादार जगहों में पहुँचने की प्रवृत्ति को ध्यान में रखकर ही इस डिजाइन को तैयार किया गया है। इसमें भंडारण पात्र दोहरी दीवार का होता है। पात्र की भीतरी दीवार छिद्रित होती है और साथ ही छिद्रित छड़ों को भी अंदर डाला जाता है। यह डिजाइन सरल है और अनाज और बीज आदि के सुरक्षित भंडारण के लिए ग्रामीण क्षेत्रों मे इसे आसानी से अपनाया जा सकता है।

मधुमक्खी के छत्ते के वास्ते एक क्लिप के विकास के लिए स्वर्गीय श्री अमृतराव इन्दुराव घाटगे, दत्तापुर, वर्धा (महाराष्ट्र) को मरणोपरांत 30,000 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया है। यह पुरस्कार उनकी पत्नी श्रीमती प्रभा घाटगे ने ग्रहण किया। बांस से बनी क्लिप का इस्तेमाल छत्ते के निचले हिस्से यानि शिशु खंड को सहारा देने के लिए किया जाता है। क्लिप के उपयोग से शहद निकालते समय छत्ता गिरने से सुरक्षित रहता है। इसमें मधुमक्खियों सहित छत्ते के निचले हिस्से को आश्यकतानुसार दूसरी जगह आराम से स्थानांतरित किया जा सकता है। इस क्लिप की मदद से मधुमक्खियों की एक कॉलोनी से बार बार शहद निकाला जा सकता है।

मृदु कोयले (सॉफ्ट कोक) के उत्पादन हेतु एक व्यापारिक संयत्र को डिजाइन करने के लिए केन्द्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान, धनबाद के वैज्ञानिक डॉ. सुशांता कुमार हाजरा तथा श्री प्रथा सेनगुप्त को संयुक्त रूप से 30,000 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया। इस डिजाइन के कारण फ्लू गैसों के वाष्पशील पदार्थ, निलंबित कणिकीय पदार्थ (एसपीएम) और अन्य दहनशील पदार्थ, विभिन्न चरणों में, साथ की भट्टियों में पूर्णतया जल जाते हैं। परिणामस्वरूप उत्सर्जन प्रदूषण प्राधिकरण द्वारा निर्धारित सीमाओं के अंदर रहता है। अब तक 180 से ज्यादा औद्योगिक इकाइयां व्यापारिक संयंत्रों को स्थापित करने में इस डिजाइन को अपना चुकी हैं।

सूक्ष्म सूक्ष्मदर्शी के विकास के लिए माइक्रो इन्स्ट्रूमेन्ट, हावड़ा, पश्चिमी बंगाल के श्री रामेन्द्र लाल मुखर्जी को 25,000 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया है। इस सूक्ष्मदर्शी में बहुत ही कम फोकस दूरी की आवर्धन युक्ति होती है, जिससे अत्यधिक आवर्धन (मैग्नीफिकेशन) प्राप्त किया जा सकता है। इसके पांच अलग अलग मॉडलों की उत्पादन लागत 40 रुपये से लेकर 170 रुपये के बीच है। अब तक ऐसी 550 इकाइयाँ बेची जा चुकी हैं। यह सूक्ष्मदर्शी आकार में तो बहुत छोटा है साथ ही साथ बहुत हल्का भी है। इस सूक्ष्मदर्शी में आवश्यकतानुसार प्रकाश की भी व्यवस्था है, जिसके कारण बिना किसी बाहरी प्रकाश में भी इससे काम लिया जा सकता है। एसएलआर कैमरे का इस्तेमाल करके इससे उम्दा सूक्ष्मफोटोग्राफ प्राप्त किए जा सकते हैं।

वाइपो पुरस्कार (2001)

अंगुलियों की अप्रकट छापों की पहचान के लिए जैन्थीन रंजकों पर आधारित नया स्प्रे फार्मुलेशन

खालसा कालेज दिल्ली के डॉ. गुरविन्दर सिंह सोढ़ी तथा कालेज ऑफ एप्लाइड साइंसेज फॉर वूमेन की डॉ. जसजीत कौर को उनके आविष्कार 'अंगुलियों की अप्रकट छापों की पहचान के लिए जैन्थीन रंजकों पर आधारित नए स्प्रे फार्मुलेशन' के लिए संयुक्त रूप से वाइपो पुरस्कार प्रदान किया गया है। इस नई तकनीक से पुराने सैम्पलों पर लगी अंगुलियों की अप्रकट छापों को पहचाना जा सकता है जो कि मौजूदा तरीके से, जिसमें चारकोल पाउडर का इस्तेमाल किया जाता है, संभव नहीं है। यह नई तकनीक कैल्सियम आयनों को स्थिर करती है।

तकली-कताई (रिंग स्पिनिंग) और दो धागों को बंटने वाली डबलिंग मशीनों के वास्ते 'सिट्रा एनरसिन'

उत्कृष्ट महिला आविष्कारक के रूप में सुश्री इंदिरा दोरांईस्वामी, निदेशक साउथ इंडिया टेक्सटाइल रिसर्च एसोसिएशन, कोयंबटूर को तकली-कताई (रिंग स्पिनिंग) और दो धागों को बंटने वाली डबलिंग मशीनों के वास्ते 'सिट्रा एनरसिन' के विकास के लिए वाइपो पुरस्कार प्रदान किया गया।

उपभोक्ता हितों की रक्षा के लिए तैयार

डी.एन.ए. पट्टिकाएँ

• एम. पी. यादव

आज के बदलते युग में किसी भी उत्पाद को पूर्ण शुद्धता के साथ उपभोक्ताओं तक पहुँचाना एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है। चाहे इत्र हो या खिलौने, काम्पैक्ट डिस्क हो या वीडियो, वस्त्र हो या कारों के कल पुर्जे, आभूषण हो या क्रेडिट कार्ड सभी के साथ बड़ी ही खूबसूरती से धोखाधड़ी जारी है, इन सबसे निपटने के लिए जर्मन वैज्ञानिकों ने एक बहुत ही साधारण, कम खर्चीली परन्तु उच्च कोटि की तकनीकी का विकास किया है। इस तकनीकी की मदद से डीएनए अणुओं की एक पट्टिका के प्रयोग से किसी भी उत्पाद को आम उपभोक्ता तक उसे असली रूप में पहुँचाया जा सकता है। इतना ही नहीं बल्कि इस डीएनए अणु पट्टिका के उपयोग से जालसाजी पर पूर्णतः विराम लगाया जा सकता है। इस प्रकार की अणुपट्टिका को शीघ्र ही बाजार में उतारने का प्रयास जारी है।

इस नए आविष्कार का सिद्धान्त 'ट्रेडिशनल बार कोड' के उस सिद्धांत से मिलता जुलता है जिसमें बहुत सी संख्या में विभिन्न मापों की काली पट्टिकाएँ लगी होती हैं, जिनका उपयोग उपभोक्ता वस्तुओं पर किया जा सकता है। डीएनए अणुओं की सहायता से विकसित इस नए उत्पाद को 'नवम्बर ए0जी0' नाम दिया गया है क्योंकि डीएनए के अंदर अपार कोडन की क्षमता होती है एवं किसी भी जीवित जीव के केवल एक लम्बी शृंखला वाले अणु में सूचनाओं के एक बहुत बड़े भण्डार को संग्रहीत किया जा सकता है।

संश्लेषण विधि से प्राप्त किसी भी प्रकार के उत्पाद की पहचान में डीएनए का उपयोग किया जा सकता है। ऐडिनीन, थायमीन, साइटोसीन, एवं ग्वानीन के क्रमिक प्रेक्षणों से सूचनाओं को एकत्रित किया जा सकता है। ये चार प्राकृतिक क्षारक अक्षर हैं तथा 'नवम्बर ए0जी0' भी यही कार्य करता है। जर्मन वैज्ञानिकों ने 50 विभिन्न अणुओं की सहायता से 0 से लेकर 99,999 के ऐसे 'बार कोड' का निर्माण किया है जो कि 10,00,000 विभिन्न उत्पादों को उनके असली रूप में रखने के लिए पर्याप्त होगा।

किसी भी उत्पाद की सतह पर केवल डीएनए पट्टिका को लगाना ही पर्याप्त होगा। इस डीएनए पट्टिका को विभिन्न तरीकों से डिजाइन किया जा सकता है। इसका उपयोग द्रवों एवं स्थूल पदार्थों अथवा औषधीय उत्पादों के साथ भी किया जा सकता है। इनके प्रयोग की सम्भावनाएँ अनन्त हैं। इस डीएनए पट्टिका का उपयोग किसी भी उत्पाद के

(शेष पृष्ठ 39 पर)
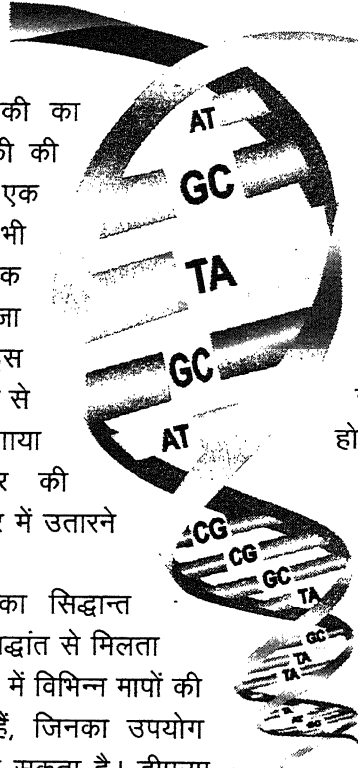
और आपका स्वास्थ्य

• प्रो० आर. सी. गुप्ता

आधुनिक चिकित्साविज्ञान के जनक– हिप्पोक्रेटीज ने कहा था "आपका भोजन ही आपकी दवा है।" तब शायद उन्होंने सोचा भी नहीं था कि केवल 1500 वर्षों में विश्व का भोजन दवा न रहकर ज़हर बन जाएगा और अब शायद आज हमें भोजन में मौजूद ज़हरों से बचने के लिए दवा की जरूरत पड़ती है। मधुमेह बढ़ रहा है, उच्च रक्तचाप अब शहरों में ही नहीं, गाँवों तक में पहुँच चुका है– दिल के मरीज आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व मेडिकल कालेजों के चिकित्सालयों में कभी कभी ही आते थे। उन दिनों इस तरह के रोगी के आने पर सीनियर विद्यार्थियों को सूचना दी जाती थी कि इस प्रकार का रोगी आया है, जाकर देख लें। पर अब शायद ही कोई सामान्य अस्पताल या नर्सिंग होम हो, जहाँ ये मरीज प्रतिदिन ही एक दो नहीं दसियों में न आते हों। और अब तो कुछ अस्पताल इन रोगों के कारण ही व्यापार के केन्द्र बन गए हैं और बन रहे हैं। कुछ अस्पतालों में तो इस तरह के रोगों के इलाज के लिए कई तरह के पैकेज मिल रहे हैं– पैसा जमा करिए, इलाज कराइये और कराते रहिए।

अब शायद किसी भी चिकित्सक के पास समय या इच्छा नहीं है कि वह रोगी को बताए या समझाए कि इन रोगों को उसने क्यों कर पाया है, अपने आहार, निद्रा और संयम के नियमों को कहाँ कहाँ और कैसे तोड़ा है और साथ ही वह अपने भोजन में कितने तरह के जहर खा रहा है?

आजकल फलों और सब्जियों में जहरीले कीटनाशकों का घुले मिले रहना आम बात हो गई है। गेहूँ में मौजूद कीटनाशकों की वजह से देश में कई बार भयंकर हादसे घट चुके हैं। गाय भैंस के दूध से लेकर माँ के दूध तक में कीटनाशकों की मौजूदगी देखी जा रही है।

हमारे देश में खानपान में कीटनाशक शामिल होने का सिलसिला सातवें दशक में चला, जब अनाजों की पैदावार बढ़ाने के लिए अधिक उपज देने वाली नाजुक किस्मों का प्रचलन शुरू हुआ। ये किस्में कीड़ों और रोगों के चपेट में बहुत जल्दी आ जाती हैं, इसलिए फसलों पर जहरीले कीटनाशकों, फफूँदनाशकों का छिड़काव जरूरी हो गया। कीटनाशकों के साथ गंभीर समस्या यह है कि ये साधारण या नैसर्गिक रूप से आसानी से नष्ट नहीं होते और लम्बे समय तक अपने जहरीले रूप में जैसे के तैसे पड़े रहते हैं। इसलिए फसलों, फलों और सब्जियों आदि पर भी कीटनाशकों के अवशेष लंबे समय तक मौजूद रहते हैं जो अन्त में हमारे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। चारे के साथ कीटनाशक गाय भैंस की देह में भी पहुँच जाते हैं और उनके दूध में घुलकर अंत में हमारी देह में प्रवाहित हो रहे खून का हिस्सा बन जाते हैं। ये शरीर के विभिन्न अंगों की मांसपेशियों में भी

इकट्ठा होते हैं और धीरे–धीरे शरीर के तमाम भागों में पहुँच जाते हैं।

इसके विपरीत 2001 की फरवरी में जापान ने अमेरिका से आयातित चावल इसलिए वापस कर दिया क्योंकि उसके बोरों में सीसा की कुछ मात्रा थी, यद्यपि चावल बिल्कुल ठीक था। केवल बोरों के कारण ही चावल लौटा दिया गया। ईराक ने तेल के बदले में दिया हुआ हमारा गेहूँ लौटा दिया और अब अफगानिस्तान में, जहाँ खाने को कुछ भी नहीं रह गया है, वहाँ भी हमारा गेहूँ लेने को कोई तैयार नहीं है।

आप बाजार में फल और सब्जी भी खरीदते हैं, तो क्या आप बड़ी बड़ी चमकदार और रंगदार सब्जी और फल अच्छी कीमत पर खरीदते हैं या फिर ऐसी सब्जी खरीदते हैं जो टेढ़ी मेढ़ी हो, कुछ कानी कुतरी हो, रंग, आकार भी छोटा हो ? ऐसे फल और सब्जी आप आधी कीमत पर भी नहीं खरीदना चाहेंगे पर निश्चित रुप से आप गलत हैं, कैसे और क्यों ?

पूरी संभावना है कि सब्जियों की वह चमक–दमक कुदरती नहीं बल्कि रासायनिक रूप से पैदा की गई हो। दरअसल सब्जीविक्रेता सब्जियों को चमकीला और चमकदार रंग देने के लिए कई तरह के कीटनाशकों के घोल में डुबोते हैं। मसलन गोभी को चमकदार हरी सफेदी देने के लिए मेथिल पैराथिन नामक घोल में डुबोया जाता है। इसी तरह भिंडी और परवल को शानदार हरा बनाने के लिए कॉपर सल्फेट या मैथालिन के घोल में डुबा देते हैं। बैंगन को और बैंगनी बनाने के लिए कार्बोफ्यूरान के घोल में डुबोया जाता है। फलों में कीटनाशकों की सबसे अधिक मात्रा अंगूर में देखी जाती है। सेब और नींबू भी कीटनाशकों से अछूते नहीं होते।

पिछली सदी के आखिरी तीन वर्षों में (1997–2000) अमेरिका ने 50 टन ऐसे कीटनाशक जो कैंसर तथा अन्य गंभीर रोग पैदा कर सकते, भारत जैसे विकासशील देशों को निर्यात किए हैं। इनमें अधिकांश ऐसे हैं जिनपर कभी परीक्षण या खोज नहीं की गई और इनमें से 10 लाख टन तो ऐसे कीटनाशक हैं जो अत्यन्त भयंकर रोग पैदा करते हैं।

हमारे खानपान में घुलते कीटनाशकों के जहर की ओर सबसे पहले सन् 1986 में ध्यान गया, जब भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान परिषद् ने एक व्यापक राष्ट्रीय सर्वेक्षण करवाया। सर्वेक्षण में चावल, मूंगफली, गाय–भैंस का दूध, बच्चों के डिब्बाबंद दूध व आहार, काली मिर्च, लाल मिर्च, हल्दी, डिब्बाबंद फलों आदि के नमूने जाँचे गए। सर्वेक्षण से मिले नतीजे बेहद चौंकाने वाले थे। अधिकांश नमूनों में जहरीले कीटनाशकों के साथ साथ खतरनाक भारी धातुएँ भी मौजूद थीं।

शायद आपको आश्चर्य ही होगा कि अहमदाबाद के एक समाजसेवी संस्थान ने हमारे आपके भोजन में काम आने वाली दालों तथा गेहूँ के आटे का परीक्षण किया (जिसमें अन्नपूर्णा, पिल्सबरी, नेचरफ्रेश इत्यादि भी शामिल थे)। इन सभी में लिन्डेन नामक कीटनाशक, जो विकसित देशों में प्रतिबन्धित है, काफी मात्रा में पाया गया। कानूनन भारत में भी इसका प्रयोग प्रतिबन्धित है। इसी तरह कुछ और भोज्य पदार्थों में एल्ड्रिन भी पाया गया और इसी तरह हमारे यहाँ के दूध और मक्खन में हेप्टाक्लोर और डीडीटी पाया गया। शायद आप जानते ही नहीं कि मँहगी से मँहगी भोजन की वस्तु खरीदकर भी आप अपने स्वास्थ्य को नष्ट कर रहे हैं। अब तो हालात इतने भयानक हैं कि दिल्ली में रहने वाली माताओं के दूध में डीडीटी की मात्रा Permissible limit से 8 गुना ज्यादा है। माँ के दूध से अधिक स्वच्छ, गुणकारी और लाभप्रद बच्चे के लिए क्या हो सकता है, पर माँ के दूध में ही जहर हो तो भारत की आगे आने वाली संतति कैसी होगी शायद आप सोच ही न सकें !

एक वैज्ञानिक अध्ययन में कीटनाशकों और गर्भपात के बीच पक्का सम्बंध स्थापित किया जा चुका है। महानगर से संबद्ध दो अस्पतालों में 15,000 शिशुओं के जन्म पर निगाह रखी गई। इनमें से 115 में कोई न कोई जन्मजात शारीरिक विकृति मौजूद थी। इनमें से 18 शिशुओं के मस्तिष्क में विकार था। इस तरह के विकृत मस्तिष्क वाले शिशुओं का जन्म उन माताओं में देखा गया, जिन्होंने मार्च से नवम्बर में गर्भ धारण

किया। गौरतलब है कि इन्हीं महीनों के बीच ही बाजार में नई फसलें कटकर आती हैं और सामान्य वर्ग के लोगों द्वारा प्रयोग में लाई जाती हैं। गेहूँ की फसल में गेहूँ जैसा एक पौधा– गेहूँ का मामा नामक खरपतवार भी इन्हीं फसलों में पैदा होने लगा है और क्योंकि इसमें दाना नहीं पड़ती है इसलिए इसे खेत से निकालना आवश्यक है और इसे निकालने की दो ही विधियाँ हो सकती हैं कि या तो इन पौधों को खुरपी की सहायता से उखाड़ दिया जाए या इनपर जहरीली खरपतवार नाशक दवाओं का प्रयोग किया जाए। यद्यपि यह खर्चीला है पर आसान है। दवा छिड़की और मामा समाप्त, पर यह भी सत्य है कि जो दवा मामा को मार सकती है वह भानजे या गेहूँ को कुछ तो नुकसान पहुँचाएगी ही और फिर यही रसायन गेहूँ के मार्फत आपके और मेरे शरीर में पहुँचेगा और अपना दुष्प्रभाव तो दिखाएगा ही। और सामान्य वर्ग के लोगों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है।

कीटनाशकों के जहर से कैसे बचें ?

अब कीटनाशक आपके अन्नों, फलों और सब्जियों में आ ही गए हैं और उनसे पूरी तरह बचना असम्भव तो नहीं, मुश्किल अवश्य है। आइए, इन कीटनाशकों की भोजन में मात्रा कम करने के कुछ उपाय समझें।

भोजन का मुख्य भाग अन्न होता है, जो गेहूँ, चावल, जौ, चना, दाल इत्यादि के रूप में होता है और इनके रखरखाव में कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है इसलिए आवश्यक है कि इनका प्रयोग करने से पहले इन्हें अच्छी तरह से एक या दो बार धोकर धूप में सुखा लें और उसके बाद ही पीसने को दें। बाजार में जो आटे की थैलियाँ मिल रही हैं, इनसे बचें। अगर आप अपने घर में अनाज का भण्डारण करते हों, तो भण्डारण करने के लिए कीटनाशक का प्रयोग न करें। अनाज के बीच सूखी हुई नीम की पत्तियाँ रखने से कीड़े दूर रहते हैं।

अगर आप घर में गाय भैंस पालते हैं और हरा चारा बाजार से लाते हैं तो चारे को भी खूब अच्छी तरह से धोकर खिलाएँ।

जहाँ तक हो सके, ऋतु के अनुसार अपने क्षेत्र में पैदा होने वाले साधारण फलों और सब्जियों का ही सेवन करें, बाहर से आई हुई बेमौसम की सब्जियों और फलों पर कीटनाशक का प्रयोग किया जाता है। चमकदार, सुन्दर रंग वाले फल और सब्जियाँ न खरीदें, तथा हल्के दागदार फलों और सब्जियों को खरीदने में संकोच न करें, बल्कि प्राथमिकता दें क्योंकि इससे संकेत मिलता है कि इन पर कीटनाशकों का प्रयोग नहीं हुआ है। पर अगर ये दाग बहुत फैले हुए हों या फल के अन्दर तक समाए हुए हों, तो इनसे दूर रहें।

शहरों में अक्सर नदियों के किनारे गन्दे नाले के पानी से उगाई गई सब्जियाँ सस्ते दामों पर मिलती हैं। इन्हें कदापि न खरीदें क्योंकि इन पर अधिक मात्रा में कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता है। फलों और सब्जियों को नल के नीचे बहते हुए पानी में कम से कम 5 मिनट तक रगड़ कर धोएँ। अधिक सुरक्षा के लिए हल्के गुनगुने पानी में खाने का सोडा या सिरका डालकर धोया जा सकता है।

अब से कुछ दिनों पूर्व तक चिकित्सकों का मानना था कि सब्जियाँ व फल अधिकांशतः छिलकों के साथ ही खानी चाहिए, पर अब यह आवश्यक हो गया है कि इनको अच्छी तरह से धोने के बाद छिलका उतार देना चाहिए ताकि शरीर में कीटनाशक न जा सके या कम से कम मात्रा में पहुँचें। सब्जियों को प्रेशर कुकर में पकाने से कीटनाशक काफी मात्रा में कम हो जाते हैं। विदेश से आयातित फलों और सब्जियों का प्रयोग न करें क्योंकि इनके भण्डारण के लिए काफी मात्रा में कीटनाशक का प्रयोग किया जाता है।

शायद आपमें से कुछ लोग सोचें कि क्या कोई अच्छे कीटनाशक नहीं हैं ? शायद नहीं। कीटनाशक आपके शरीर को नुकसान करेंगे ही। अब आप पर ही निर्भर है कि आप इनसे कितना बच सकते हैं।

78–बी, टैगोर टाउन
इलाहाबाद

जयपुर का विज्ञान उद्यान

• डॉ० अरविन्द मिश्र

राजस्थान की राजधानी जयपुर, जो गुलाबी शहर के रूप में विख्यात है, अब एक नए आकर्षण का केन्द्र बन रही है और वह आकर्षण है यहाँ का विज्ञान उद्यान। चिलचिलाती धूप और लू के थपेड़ो के बीच इस गर्मी के मौसम में भी यह पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। क्यों न आप भी बाल गोपाल के साथ इन गर्मियों की छुट्टियो में इस विज्ञान के अजूबे और नाना प्रकार के विज्ञान खेलों का आनन्द उठाएँ ?

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, राजस्थान सरकार द्वारा स्थापित यह उद्यान आम लोगों, विशेषकर बच्चों में विज्ञान के प्रति रुझान उत्पन्न करने में पूरी तरह से सक्षम साबित हुआ है। अपने ढंग के इस अनूठे विज्ञान उद्यान में विज्ञान के नियमों पर आधारित खेल–खिलौने, मॉडल दर्शकों का भरपूर मनोरंजन करते हैं। साथ ही, उद्यान में तरह तरह के औषधीय पौधों, संग्रहालय, राजस्थान की प्रमुख खनिज सम्पदा के नमूनों का भी दर्शन होता है।

प्रवेश द्वारा पर पहुँचते ही भारतीय अन्तरिक्ष कार्यक्रम का प्रतिनिधित्व करता एक विशाल राकेट माडल दर्शकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेता है और इस पर से नज़रें हटी नहीं कि एक दैत्याकार डायनासोर दर्शकों को सहसा ही डरा देता है। लेकिन डर का यह भाव अगले ही क्षण कौतूहल व रोमांच में बदल जाता है जब बच्चे यह कहते हुए कि "अरे यह तो मॉडल है", उस दैत्य से मिलने दौड़ पड़ते हैं।

चाहे राकेट या डायनासोर के विशाल मॉडल हों या फिर मनोरंजन विज्ञान के छोटे नमूने– सभी के साथ साथ संक्षेप में उनका विवरण वहाँ स्थापित सूचना निर्देश पट्टिकाओं पर दिया गया है। विज्ञान के माडलों को एक षट्कोणीय विस्तार (Hexagonal layout) में व्यवस्थित किया गया है। जिनमें मुख्य आकर्षण निम्नवत हैं

1. ऊर्जा की भूलभुलैया
2. क्रिया–प्रतिक्रिया
3. घूर्णन का आनन्द
4. लुढ़कते पहिए,
5. गुरुत्व का विरोध
6. न्यूटन का पालना / झूला
7. कंचों (गोली) की दौड
8. बोलते पुतले आदि।

राजस्थान बेशकीमती खनिजों का भण्डार है। इन खनिजों के नमूने उद्यान में सहज ही दर्शनीय हैं, जिनमें प्रमुख हैं : जिप्सम, मार्बल,ग्रेनाइट, एक्टीनोलाइट, एस्बेस्टॉस, कायनाईट, सीसा, जस्ता, हेमेलाइट आदि।

उद्यान में विज्ञान के कतिपय कठिन समझे जाने वाले सिद्धांतों को बहुत ही सरल तरीके से समझाया गया है। जैसे कि पाइथागोरस प्रमेय को एक मॉडल
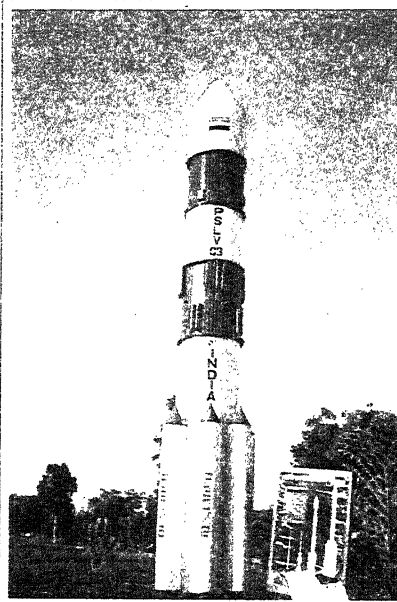
सरल ढंग से व्याख्यायित करने वाला है। इन मॉडलों के अलावा कई तरह की चाईनीज पहेलियां, पेरीस्कोप, चक्कर पे चक्कर आदि जुगतें बच्चों का खूब दिल बहलाती हैं और उन्हें खेल खेल में विज्ञान का पाठ भी पढ़ाती चलती हैं। कई तरह के प्रौद्योगिकी मॉडलों में रज्जु पुल, आर्च पुल, झूलते पुल, रज्जुवक्र मेहराब दर्शनीय हैं।

इसी उद्यान में 'ऊर्जा पार्क' में उन्नत चूल्हे, सोलर स्ट्रीट लाइट, सोलर डोमेस्टिक लाइट, सोलर लालटेन, सोलर कलर टी. वी., सोलर पंप, विण्ड मिल, सोलर कुकर, सोलर स्टिल, सोलर वाटर हीटिंग प्रणाली का प्रदर्शन भी होता है जो ऊर्जा के नए स्रोतों की जानकारी देकर इन गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के प्रति आम जनता में आश्वस्ति का भाव जगाता है।
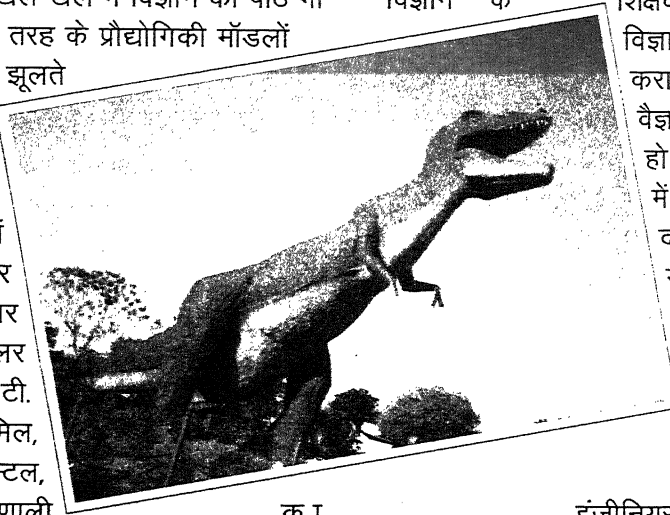
यह विज्ञान उद्यान विज्ञान के लोकप्रियकरण की दिशा में एक मील का पत्थर है। बच्चों के लिए तो अत्यन्त ही दर्शनीय एवं सूचनाप्रद है। अभिभावकों और विज्ञान के शिक्षकों को अपने बच्चों को इस विज्ञान पार्क की सैर जरूर करानी चाहिए जिससे उनमें वैज्ञानिक नज़रिए का विकास हो सके। विज्ञान के इस युग में इस विज्ञान उद्यान का दर्शन कराने में सही मायनों में पुण्यलाभ होगा। विस्तृत विवरण के लिए आप उद्यान के क्यूरेटर से सम्पर्क कर सकते हैं, जिनका पता है –

इंजीनियर कैलाश मिश्र
साइंस पार्क, शास्त्री नगर
6, इन्द्रा कालोनी, बानी पार्क
जयपुर फोन : 304654

डॉ० जोशी को मैत्री पदक

मंगोलिया ने भारत के मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ० मुरली मनोहर जोशी को अपने देश के सर्वोच्च सम्मान 'मैत्री पदक' से सम्मानित किया है। डॉ० जोशी पहले भारतीय हैं जिन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ है। बधाइयाँ !

– सम्पादक

हिन्दी में विज्ञान लेखन के लिए...

सबसे बड़ा पुरस्कार

डॉ0 महाराज नारायण मेहरोत्रा तथा डॉ0 गोपाल काबरा को हिन्दी द्वारा विज्ञान की दीर्घकालीन सेवा करने के लिए 2001 का बहुसम्मानित पुरस्कार डॉ0 आत्माराम पुरस्कार प्रदान किया गया है जिसमें प्रत्येक को 2 लाख 51 हजार की राशि सम्मिलित है।

(1) डॉ0 महाराज नारायण मेहरोत्रा

डॉ0 मेहरोत्रा का जन्म 12 अप्रैल, 1929, काशीपुर, जिला नैनीताल (उ0प्र0) में हुआ। उन्होंने 1951 में एम.एससी. (जियॉलाजी) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण करके जर्मनी से डॉ0 नेर नेट, 1964, आखेन प्राप्त की। तत्पश्चात् काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापन एवं शोध कार्य में लगे रहकर सेवानिवृत्त हुए। उनका कृतित्व प्रस्तुत है :

1. शोधप्रबन्ध (पीएच.डी. थीसिस)

राष्ट्रभाषा के माध्यम से भूविज्ञान में दो पीएच. डी. शोधप्रबन्ध प्रस्तुत करवाए, संस्तुत्य एवं प्रशंसित, यथा– 'सोन घाटी पश्चिमांचल का अवसादकीय अध्ययन' जनपद मिर्जापुर एवं सीधी, भारत, 1974।

वाराणसी में गंगा प्रदूषण – अवसादकीय अध्ययन, 1990।

2. शोधपत्र एवं तकनीकी लेख

दस शोधपत्र हिन्दी की अनुसन्धान पत्रिकाओं, यथा– विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका, दि इन्स्टीट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स (इण्डिया), भूविज्ञान आदि में प्रकाशित।

100 से अधिक लेख हिन्दी विश्वकोश एवं प्रमुख पत्र–पत्रिकाओं – विज्ञान गरिमा सिंधु, विज्ञान प्रगति, विज्ञान आदि में प्रकाशित

3. पुस्तकें एवं अनुवाद

पृथ्वी की आयु : द्वितीय संस्करण, 1967, हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, पृ0 284।

हमारा पर्यावरण : प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1993 पृ0 78।

प्रसिद्ध अमरीकी ग्रन्थ 'डाना की टेक्स्ट बुक ऑफ मिनरालॉजी' का अनुवाद, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1979–80, पृ0 1628।

'वेल्थ ऑफ इण्डिया', 'हिन्दी विश्वकोश' आदि के लिए लेखों का अनुवाद। 'रत्न विज्ञान', 'आर्थिक खनिज निक्षेप' आदि पुस्तकों का विधीक्षण एवं 'टिरेल की शैलिकी के सिद्धान्त' आदि की समीक्षा।

4. शब्दावली निर्माण

सदस्य, प्रवर समिति (भूविज्ञान), शब्दावली आयोग, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

भौमिकी (भूविज्ञान) शब्दावली पर लेख तथा विभिन्न कार्यशालाओं में सक्रिय भाग तथा सहस्त्रों पर्यायवाची शब्दों के परिनिश्चयन में योगदान।

5. संपादन कार्य

सदस्य, संपादन मंडल, परामर्शदात्री समिति 'विज्ञान प्रगति' सी.एस.आई.आर., नई दिल्ली, 1987–89।

सदस्य, संपादक मंडल 'प्रज्ञा', काशी हिन्दू विश्वविद्यालय पत्रिका, 1964–1984।

भूविज्ञान परिषद् की पत्रिका 'भू–विज्ञान' के संपादन में सक्रिय योगदान।

6. संगोष्ठियाँ एवं कार्यशालाएँ

अखिल भारतीय वैज्ञानिक संगोष्ठियों एवं तकनीकी कार्यशालाओं में योगदान, यथा– सत्र अध्यक्षता, प्रपत्र प्रस्तुति आदि, दिल्ली (1997), वाराणसी

(1997), देहरादून (1993, 1992), वाराणसी (1991, 1989), प्रयाग (1988, 1986), रुड़की (1988, 1984), कानपुर (1986), अहमदाबाद (1985), भोपाल (1970), आदि–आदि।

7. आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं अन्य कार्यक्रम

आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के निमन्त्रण पर हिन्दी में आयोजित कार्यक्रमों में सक्रिय भाग।

रोटरी क्लब आदि संस्थाओं में पर्यावरण, ऊर्जा स्रोत आदि विषयों पर हिन्दी में भाषण।

'विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी', दूरदर्शन, लखनऊ, मार्च 1985।

8. अन्य सम्मान

• 1987 'क्रिटिक सर्किल ऑफ इण्डिया एवार्ड' राष्ट्रभाषा के माध्यम से विज्ञान की सेवा के लिए प्रदत्त।
• 1992 'हिन्दी सेवा सम्मान' केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्, वाराणसी।
• पूर्व अध्यक्ष, वैज्ञानिक एवं तकनीकी परिषद्, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
• पूर्व अध्यक्ष, विज्ञान परिषद् प्रयाग, वाराणसी शाखा।
• संस्थापक सदस्य एवं सचिव, भूविज्ञान परिषद्, नई दिल्ली।
• मूल्यांकन विशेषज्ञ, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली।
• भूविज्ञान परिषद्, प्रयाग, लोक विज्ञान परिषद्, दिल्ली, हिन्दी कक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, शब्दलोक संगोष्ठी, वाराणसी के सदस्य एवं वैज्ञानिक पत्रिकाओं के मानित लेखक।
• 1999 'विज्ञान भास्कर' उपाधि, विज्ञान परिषद् प्रयाग।
• 2001 'डॉ0 आत्माराम सम्मान', केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा।

पता : 22 उपेन्द्र नगर, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी–221005.
फोन : (0542) 310241

डॉ0 श्रीगोपाल काबरा

जन्म : 25 दिसम्बर, 1936, स्थान–ग्राम लोसल, ज़िला सीकर, राजस्थान

शिक्षा : एम.बी.बी.एस.–1969, कलकत्ता, एल.एल. बी. –1965, उदयपुर • एम.एससी.; मेडिकल–1966, जयपुर, • एम.एस.एनाटोमी–1968, जयपुर • एम.एस. जनरल सर्जरी–1972, जयपुर • पी.जी. डिप्लोमा इन जर्नलिज्म –1981, जयपुर।

कार्यक्षेत्र व अनुभव :

1. शिक्षक, शरीर रचना विज्ञान, राजस्थान के मेडिकल कालेजों में विभिन्न पदों पर 1963 से 1984 और 1990 से 1994।
2. अनुसंधान निदेशक, संतोकबा दुर्लभजी अस्पताल, जयपुर 1984 से 1990।
3. वरिष्ठ अनुसंधान सलाहकार, राजस्थान वालंटरी एसोसिएशन, जयपुर, 1995 से 1997।
4. वरिष्ठ वैज्ञानिक, इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ मैनेजमेंट रिसर्च, जयपुर, 1995 से 2000।
5. वकील, पारस कुहाड एसोसियेट, जयपुर, 1997 से 1999।
6. सलाहकार, संतोकबा दुर्लभजी अस्पताल, जयपुर 1995 से अभी तक कार्यरत।

महत्वपूर्ण ग्रंथ

चिकित्सा! बढ़ते चरम गिरते स्तर
बांझ पोस्टमार्टम
रोग और उनकी रोकथाम
आपने कहा था

बाल साहित्य :

चिकित्सा की कहानी दादा की जुबानी, शरीर की सैर।

मानव मशीन का परिचय।

पुरस्कार–पदक :

चिकित्सा में विभिन्न विषय पर अनुसंधान कार्य के लिए अनेक स्वर्ण पदक एवं पुरस्कार जिनमें हरिओम आश्रम एलैम्बिक रिसर्च अवार्ड (1979), राजस्थान का विशेष योग्यता का राज्य पुरस्कार (1982) गार्गी देवी शूरवीर सिंह पुरस्कार (1987)

स्थायी पता : 15, विजय नगर, डी–ब्लाक, मालवीय नगर, जयपुर। फोन : 721246

मानसून का मौसम अर्थात् वर्षा ऋतु भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए प्रकृति की एक महान देन है। यह मौसम भारत की प्रमुख ऋतु है। भारत की 75 प्रतिशत वर्षा इसी ऋतु में होती है। इस मौसम की अवधि जून से सितम्बर माह तक मानी जाती है। इसी कारण इसको आम जनता चौमासे के नाम से भी जानती है। इस मौसम के बारे में प्राचीन काल से भारत में अध्ययन होता रहा है। प्राचीनकाल में मौसम सम्बन्धी मापन यन्त्रों का आविष्कार नहीं हुआ था इसलिए मानसून सम्बन्धित जानकारी केवल अनुमान और वर्षा के मापन तक ही सीमित रहती थी। अनेक कहावतें प्रचलित थीं जिनसे आम जनता और कृषक वर्षा ऋतु के आगमन और वर्षा के कम या अधिक होने के अनुमान लगाया करते थे। दीर्घ काल की वर्षा का अनुमान ज्योतिष विद्या में जंत्रियों से लगाया जाता था। इन अनुनानों में मौसमी हवाओं का कोई प्रयोग नहीं होता था। पन्द्रहवीं सदी में कई प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार दुनिया में हुआ। जब यूरोप के नाविक महासागरों को लांघकर व्यापार करने लगे तो उन्होंने मौसम सम्बन्धी यन्त्र जैसे थर्मामीटर, वायु मापन यन्त्र और वायु दाब मापन यन्त्र का अपने जहाजों में प्रयोग करना आरम्भ किया। इन यन्त्रों से मानसून की हवाओं के बारे में जानकारी उपलब्ध हुई।
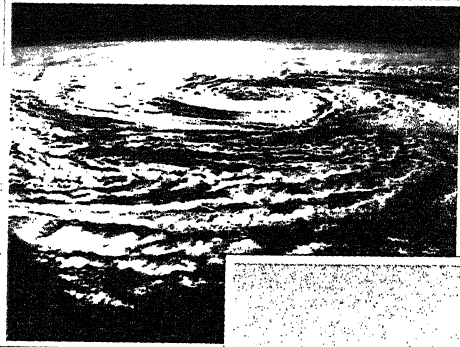
मानसून की हवाएँ और वर्षा हवाएँ मौसमी होती हैं। मौसम बदलने के साथ इनकी अरब सागर और बंगाल की खाड़ी की दिशाओं में परिवर्तन होता है। जून और सितम्बर माह में इनकी दिशा दक्षिण पश्चिम की ओर से होती है और सर्दी के मौसम में यह बदलकर उत्तर पूर्व की ओर हो जाती है। इसी कारण से ये हवाएँ दक्षिण पश्चिमी और उत्तर पूर्वी मानसून के नाम से जानी जाती हैं। भारत की वर्षा ऋतु मुख्यतः जून से सितम्बर माह तक होती है। इस अवधि को दक्षिण–पश्चिमी मानसून के नाम से भी जानते हैं।

दक्षिण पश्चिमी मानसून के मुख्य वैज्ञानिक कारण निम्नलिखित हैं–

(क) धरती का अपनी धुरी पर घूमना।

(ख) गर्मी के मौसम में भारत और एशिया के भूभाग पर अत्यधिक उष्णता और हवा का कम दबाव वाला क्षेत्र।

(ग) भारत की औद्योगिक स्थिति जिसमें विशाल हिमालय और एशिया का विशाल भूभाग उत्तर में, अरब सागर इसके पश्चिम में, बंगाल की खाड़ी इसके पूर्व में और हिन्द महासागर इसके दक्षिण में स्थित है। भारत के तीनों ओर सागर और चौथी ओर एशिया का विशाल क्षेत्र है।

(ग) भूभाग और सागर की उष्णता का अन्तर

होता है। भूभाग शीघ्र गर्म हो जाता है और सागर देर से गर्म होता है। भारत के स्थानों पर उष्णता के कारण वायु दाब अत्यधिक होता है। भारतीय भूभाग स्थान और हिन्द महासागर की ओर से हवा भारत की ओर अग्रसर होती है। भूमध्य रेखा के पास पृथ्वी के घूमने के कारण इस हवा की दिशा दक्षिण पूर्व से बदल कर दक्षिण पश्चिमी हो जाती है। दक्षिणी पश्चिमी हवाएँ सागरों से होकर आती हैं इसलिए ये नमी से भरपूर होती हैं। ये हवाएँ ऊपर की ओर उठती हैं और इनकी नमी बादलों के रूप में परिवर्तित हो जाती है। ये बादल विशाल और घने होने के कारण अत्यधिक वर्षा करते हैं। पश्चिमी घाट, उत्तर पूर्वी भारत और हिमालय की तराई के क्षेत्र में पर्वतों के ऊपर उठते हुए ये बादल भयंकर वर्षा करते हैं। भारत में मानसून की वर्षा स्थान स्थान पर भिन्न भिन्न होती है। मध्य भारत और गंगा की घाटी में यह वर्षा 150 से 200 सेंटीमीटर तक होती है। मध्य भारत और गंगा की घाटी में वर्षा 100 से 120 सेंटीमीटर तक उत्तर पश्चिमी भारत में वर्षा 60 से 70 सेंटीमीटर तक और पश्चिमी राजस्थान में केवल 30 सेंटीमीटर तक होती है। संपूर्ण भारत के आधार पर मैदानी हिस्से में मानसून की वर्षा लगभग 85 सेंटीमीटर है। इस औसत वर्षा का एक से दूसरे वर्ष में 10 प्रतिशत तक अन्तर हो सकता है। इसी प्रकार सूखे के दौरान मानसून की वर्षा औसत से 20–30 प्रतिशत कम हो सकती है और अत्यधिक वर्षा 20–25 प्रतिशत से अधिक भी हो सकती है।

मानसून की वर्षा की मात्रा इस ऋतु में बदलती रहती है। कुछ दिनों तक किसी भाग में वर्षा अत्यधिक होती है तो किसी भाग में वर्षा कम होती है। कुल अवधि पाँच से दस दिनों तक लम्बी रहती है। भारत के अधिकतर भागों में वर्षा कम होती है या थम जाती है। इस अवधि को मानसून का रुकना यानी ब्रेक मानसून कहा जाता है। वर्षा के आसार बदलते रहते हैं, जैसे दिन और रात में वर्षा की असमानता, वर्षा कम होना या अधिक होना और एक से दूसरे वर्ष की वर्षा में असमानता आदि मानसून के बारे में ये सब बातें अध्ययन के मुख्य विषय हैं। इन विषयों पर भारत और विश्व के अनेक देशों में गूढ़ खोज जारी है।

मानसून के अध्ययन के विषय में कई राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम पिछले 40 वर्षों में चालू किए गए हैं जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय हिन्द महासागर अनुसंधान (IIOE) (1963–1985), मोनेक्स (MONEX), 1979 और इण्डोएक्स (INDOEX, 1984-88), मानसून ट्रॅफ में निचली सतह का अध्ययन (Monsoon Trough Boundary Layer Experiment, 1989-90), उष्ण सागर विश्व वायु–मण्डल (Tropical Ocean Global Atmosphere-TOGA] 1985-95) इत्यादि प्रमुख प्रोग्राम हैं। पिछले वर्ष 1999 में भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने ही बल पर बंगाल की खाड़ी के मानसून प्रयोग (BOMBEX) की रचना की जिसमें दो वैज्ञानिक अन्वेषण जलयान, उपग्रह, भारत की अनेक प्रयोगशालायें, रडार (Radar) और महासागर विकास विभाग ने प्लवकों का प्रयोग किया है। BOBMEX से महत्वपूर्ण आंकड़े प्राप्त हुए हैं जिनका अध्ययन किया जा रहा है।

मानसून सम्बन्धी खोज में प्रगति

1802 ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत की पहली वेधशाला चेन्नई में स्थापित की। आगामी 50 वर्षों में कई मौसम सम्बन्धी वेधशालाओं की स्थापना की गई थी जो मुख्यतया फौजी छावनियों में स्थापित की गई थीं। इन वेधशालाओं में मौसम मापने के यन्त्र एक जैसे और एक ही मानक के नहीं थे तथा इन वेधशालाओं का प्रबंध प्रान्तीय विभाग करते थे। 1875 में भारत सरकार ने भारतीय मौसम विज्ञान विभाग की स्थापना की। डॉ० बलेनफोर्ड ने सब वेधशालाओं को एक जैसे मानक यन्त्र उपलब्ध करवाए। वर्षा का पुराना रिकार्ड इकट्ठा किया गया और उसे ठीक किया गया तथा एक महान ग्रन्थ 'भारत की वर्षा' (Rainfall of India) प्रकाशित किया गया जो आज तक एक महान कार्य माना जाता है। उन्होंने एक और महान कार्य किया था और वह था दीर्घकालिक मानसूनी वर्षा अनुमान (Long Range Forecasting of

Monsoon) का आधार मुख्यतया सर्दी के मौसम में हिमालय पर बर्फ के अनुमान पर था। यदि बर्फ की मात्रा अधिक हो तो आने वाली मानसून भारत में कमजोर होने की सम्भावना और वर्षा औसत से कम। उन्नीसवीं सदी के अन्त में मौसम सम्बन्धी जानकारी तार (Telegraph) द्वारा इकट्ठी होने लगी। इस साधान से मौसम सम्बन्धी जानकारी भारत में प्रतिदिन उपलब्ध होने लगी और इसी के साथ आने वाले 24 घण्टों में मौसम का अनुमान (Daily weather forecasting) का शुभारम्भ हुआ। 1929–40 की अवधि में मौसम सम्बन्धी कई प्रकार की जानकारी में काफी बढ़ोत्तरी हुई तथा वेधशालाओं का विस्तार हुआ। हवा की ऊपरी लहरों और दिशाओं को जाँचने के लिए अनेक वेधशालाएँ स्थापित की गईं। मानसून के विश्वव्यापी सम्बन्ध के बारे में महत्वपूर्ण अनुसंधान हुए जिसमें महासागर में बदलते हवा दाब का काफी महत्व है। भारतीय मौसम विज्ञान विभाग में भारतीय अधिकारियों की नियुक्ति की गई। भारत की आजादी से पूर्व ही भारतीय मौसम विज्ञान के सब अधिकारी भारतीय थे। मौसम विभाग में 1947 के बाद अधिक तेजी से विस्तार का दौर का आरम्भ हुआ।

1947 से पहले भारत में मौसम और मानसून के बारे में अनुमान अधिकतर भारतीय भूमण्डल की निचली सतह की जाँच के बाद किया जाता था। ऊपरी सतह के बारे में जानकारी 1950 से आरम्भ हुई और इसके प्रयोग से मौसम का अनुमान और अच्छा होने लगा। 1950 से 1980 के बीच कई नए प्रकार के आधुनिक उपकरण लगाए गए जिसमें राविन रडार (Rawin Radar) और मौसम रडार (Weather Radar) और इनसेट (INSAT) सम्मिलित हैं। इसके साथ कई संस्थान जलवायु और महासागर की खोज के लिए स्थापित हुए– जैसे भारतीय उष्ण देशीय मौसम संस्थान पुणे, राष्ट्रीय समुद्र संस्थान (NCMRWF), मौसम के अनुमान संस्थान तथा मौसम के अनुमान के कई बड़े और मध्यम दर्जे के कार्यालयों की स्थापना। मौसम सम्बन्धी आँकड़े जो 1950 तक केवल भारत का ही मौसम दर्शाते थे 1980 तक सारे विश्व के मौसम सम्बन्धी आँकड़े इकट्ठे किये जाने लगे। यह एक महान उपलब्धि है। ये आँकड़े विश्वव्यापी कम्प्यूटरों की सहायता से इकट्ठे किये जाते हैं और भारत इस वितरण प्रणाली का एक महत्वपूर्ण अंग है। ये आँकड़े अब कम्प्यूटर से न केवल एकत्र होते हैं बल्कि कम्प्यूटर इनका विश्लेषण करके मौसम सम्बन्धी भविष्यवाणियाँ भी उपलब्ध कराते हैं। इस प्रणाली को अंकीय मौसम भविष्यवाणी कहते हैं। इन सब साधनों की उपलब्धि से मानसून के विभिन्न अनुमानों में काफी सुधार हुआ है।

मानसून के पूर्वानुमान के प्रकार

मानसून के मौसम का पूर्वानुमान चार प्रकार से होता है :

स्थानीय पूर्वानुमान : इसमें मौसम सम्बन्धी जानकारी राज्य और उसके आसपास के क्षेत्रों से प्राप्त की जाती है। मौसम रडार और उपग्रह से बादलों की स्थिति की जानकारी मिलती है। इन अनुमानों की अवधि 6 से 24 घण्टों की होती है और इसे हर छः घण्टे में बदला जाता है।

अल्पकालिक पूर्वानुमान : इसकी अवधि 24–72 घण्टों की होती है। यह राज्यों और सम्पूर्ण भारत के बारे में दिया जाता है। राज्य और सम्पूर्ण भारत के मौसम कार्यालय इस पर अध्ययन करते हैं। इसमें सारे भारत, एशिया, उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव के मौसम सम्बन्धी आँकड़ों का प्रयोग होता है। पूर्वानुमान अधिकारी की अपनी जानकारी और अनुभव पर निर्भर होते हैं। इसमें कम्प्यूटर का भी प्रयोग किया जाता है।

मध्यम अवधि का मौसम पूर्वानुमान : यह पूर्वानुमान 3–10 दिनों का होता है। यह भारतीय मौसम विभाग, पुणे और दिल्ली स्थित कार्यालय से दिया जाता है। ऐसे पूर्वानुमान केवल कम्प्यूटर के प्रयोग से लगाए जाते हैं और कृषि कार्यों के लिए उपलब्ध कराए जाते हैं। चूँकि यह अवधि 3 दिनों से अधिक होती है इसलिए इसमें मानसून के कमजोर

होने, वर्षा के कम होने या अधिक जोर पकड़ने अथवा विस्तार होने सम्बन्धी महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। इस कार्य में सारे विश्व के मौसम सम्बन्धी आँकड़े प्रयोग में लाए जाते हैं।

मानसून का दीर्घकालिक पूर्वानुमान : इसमें आने वाली मानसूनी मौसम में सम्पूर्ण भारत या भारत के कुछ भागों पर वर्षा की मात्रा का अनुमान दिया जाता है। यह अनुमान कृषि, सरकारी जानकारियों और योजनाओं के लिए बहुत लाभकारी है। इसमें क्षेत्रीय और विश्वव्यापी मानसून सम्बन्धी सूचनाओं का प्रयोग होता है। 1987 के बाद इसमें 16 प्राचलों के आँकड़े प्रयोग में लाए जाते हैं। इनमें कुछ आँकड़े वायुमंडल से और कुछ महासागर से सम्बन्धित होते हैं, तथा भारत और उससे बाहर के क्षेत्रों से एकत्र किए जाते हैं जो विशेष सेवाओं जैसे कृषि, हवाई सेवाओं तथा सागर सम्बन्धी सेवाओं इत्यादि के लिए होते हैं।

पिछले 40 वर्षों में मानसून की जानकारी और इसके पूर्वानुमान के बारे में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। मानसून और मौसम सम्बन्धी पूर्वानुमानों की जानकारी एक महत्वपूर्ण विषय है। इसके अध्ययन में भारत और अन्य देशों के बहुत से वैज्ञानिक काम में जुटे हुए हैं। ये अध्ययन अति आधुनिक माध्यम से किए जाते हैं और इनमें वायुमंडलीय और महासागर वैज्ञानिक विशेषज्ञ भाग लेते हैं। मानसून के पूर्वानुमान अत्यन्त जटिल होते हैं। पिछले 30 वर्षों के मानसून के बारे में महत्वपूर्ण खोज हुई है और इस खोज के आधार पर दिन प्रतिदिन के मौसम सम्बन्धी अनुमानों में कम्प्यूटर उपग्रह और सूचना प्रणाली अधिक से अधिक प्रयोग में लाए जाते हैं। अनेक प्रकार के अध्ययन और खोजों के माध्यम से आगामी मानसून और मौसम के अनुमान अब काफी सही सिद्ध हो रहे हैं। इन अनुमानों का अनेकों राष्ट्रीय कार्यक्रमों में प्रयोग किया जाता है। यह सच है कि हम मौसम या मानसून को नहीं बदल सकते। कुछ वैज्ञानिकों को सन्देह है कि आधुनिक औद्योगिक वातावरण अगले 50–100 वर्षों में जलवायु में बहुत बड़ा परिवर्तन ला सकता है। ऐसी स्थिति में विश्व के लिए अति हानिकारक सिद्ध हो सकती है। कुल मिलाकर मानसून के पूर्वानुमान में काफी सुधार हुआ है। यह कहना भी व्यर्थ न होगा कि मानसून और वर्षा के अनुमान केवल अनुमान ही हैं और इनमें कुछ न कुछ अनिश्चितता अनिवार्य है। हमें आशा है कि इस अनिश्चितता की मात्रा को अगले 10–20 वर्षों में खोज, अध्ययन और अनुसंधान तकनीक से काफी हद तक कम किया जा सकेगा।

डॉ0 मंजु शर्मा सम्मानित

जैव विज्ञान के क्षेत्र में अनेक उपलब्धियाँ प्राप्त करने के लिए जैव प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव श्रीमती डॉ0 मंजु शर्मा को गूजरमल मोदी पुरस्कार से सम्मानित करने की घोषणा की गई है।

विज्ञान परिषद् परिवार अपने सभापति डॉ0 मंजु शर्मा को इस सम्मान पर हार्दिक बधाइयां देता है।

– सम्पादक

जय विज्ञान, जय कलाम

भारत के 'मिसाइल मैन' डॉ0 अब्दुल कलाम द्वारा राष्ट्र के सर्वोच्च पद को सुशोभित करने पर विज्ञान परिवार की ओर से उनका हार्दिक अभिनन्दन।

– सम्पादक

विज्ञान वार्ता

बधिरों को संकेतों की भाषा समझाएंगे 'साइमन'

क्या ऐसा संभव है कि बधिर व्यक्ति भी बात सुन सकता है ? इस विषय पर ब्रिटेन के डाकखानों में ऐसे कम्प्यूटर सिस्टम से परीक्षण का कार्य जारी है जिसके अन्तर्गत काउन्टर में बैठे क्लर्क की आवाज को इशारों की भाषा में बदल देंगे। इस प्रयोग के अनुसार बधिरों को क्लर्क की बात सरलता से समझ में आ जाएगी। इस सिस्टम में आवाज शब्दों में बदल कर स्क्रीन पर टेक्स्ट भी प्रदर्शित कर सकेगी। इस नवीनतम कम्प्यूटर सिस्टम को नार्वे की कंपनी 'टेलीवर्च्युअल' तथा 'ईस्ट एंग्लिया विश्वविद्यालय' द्वारा विकसित किया गया है।

दरअसर इस कम्प्यूटर सिस्टम में आवाज को पहचान सकने वाले कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा सकेगा। इस प्रकार के क्लर्क की आवाज को लिखित शब्दों में भी बदला जा सकेगा। उपयुक्त कंपनी द्वारा विकसित साफ्टवेयर में सैकड़ों शब्द तथा उनको प्रदर्शित करने वाले संकेत भी सम्मिलित हैं। इस प्रक्रिया में स्क्रीन पर बोली गई आवाज को उसे प्रदर्शित करने वाले संकेतों से दिखाया जा सकेगा। परंतु इस सिस्टम की एक कमी अभी भी है कि इसमें केवल एकतरफा संवाद ही हो सकता है।

उपर्युक्त कमी को दूर करने के लिए सही समाधान ढूंढने के प्रयास में टेलीवर्च्युअल सहित कई बड़ी कंपनियाँ लगी हुई हैं। वास्तविकता यह है कि वे होठों को पढ़ सकने वाले सिस्टम का निर्माण करने की चेष्टा में व्यस्त हैं। संभवतः इस अवस्था तक पहुँचने में और समय लग जाएगा। इस समय इस सिस्टम द्वारा उपलब्ध सुविधा के उपयोग हेतु काउन्टर पर एक स्क्रीन तथा दोतरफा संचार संभव करने के लिए एक वीडियो कैमरे की आवश्यकता पड़ेगी।

वैसे प्रारंभ में ऐसा प्रयास किया जा रहा था ताकि स्क्रीन पर आ रहे लिखित संवादों को संकेतों की भाषा में परिवर्तित किया जा सके। इस प्रयास के अतर्गत संकेतों के वाक्य बनाने के लिए कई वीडियो क्लिपों का प्रयोग किया गया। परंतु यह प्रयास सफल नहीं हो सका जिसका मुख्य कारण यह है कि वीडियो क्लिपें प्रायः संतोषजनक प्रभाव उत्पन्न करने में असफल सिद्ध हुई।

फिर टेलीवर्च्युअल ने एक काल्पनिक (वर्च्युअल) लिपिक ही बना डाला। यह काल्पनिक लिपिक बहरे व्यक्तियों को संकेतों से बात समझा सकने में सफल रहा। इस सफलता का यह रहस्य था कि इस प्रकार की भाषा में हाथ नहीं बल्कि चेहरे के भाव तथा शरीर की चाल की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

अतः इस कम्पनी ने अपना स्वयं का मोशन पिक्चर सिस्टम भी विकसित किया है। इंस सिस्टम में हाथ के अलावा शरीर तथा चेहरे के भाव भी निर्धारित किए गए। अब संकेतों की भाषा में पारंगत व्यक्ति की सहायता से इन्हें सिस्टम में प्रयोग किया गया है। इस काल्पनिक लिपिक का नाम साइमन रखा गया है। साइमन काउन्टर की दूसरी तरफ बैठे क्लर्क की बातों को संकेतों से बधिर ग्राहक को स्क्रीन पर समझा देता है। इस कम्प्यूटर सिस्टम में अलग अलग संकेतों को वाक्यों में ढालने की मजबूत व्यवस्था की गई है। परंतु अभी इस सिस्टम के सामने सबसे बड़ी समस्या संकेतों की भाषा में विद्यमान विभिन्नता की है। इस क्षेत्र में और भी विकास अनुसंधान की अपेक्षा है। यदि इन कमियों तथा समस्याओं का समाधान ढूंढने में सफलता वैज्ञानिकों को मिल जाती है तो बधिर व्यक्तियों के लिए यह सिस्टम एक वरदान सिद्ध होगा।

रहस्यमय आग के गोले

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि जमीन के ऊपर गेंद के आकार के आग के गोले दिखाई देते हैं। वैसे तो वर्षा ऋतु में भी बादलों की गड़गड़ाहट के साथ बिजली गिरती है परंतु आग के गोलों के देखे जाने की घटना बिल्कुल अलग है। इससे पहले ऐसा क्यों होता है इसका सही स्पष्टीकरण करना मुश्किल काम था। अतः 'बॉल लाइटिंग' नाम से जानी जाने वाली यह प्रक्रिया लम्बी अवधि तक रहस्यमय बनी रही। परंतु अब न्यूजीलैंड के दो वैज्ञानिकों ने इन आग के गोलों के रहस्यों का पता लगाने का दावा किया है। इस परिप्रेक्ष्य में अंतर्राष्ट्रीय स्तर की विज्ञान पत्रिका 'नेचर' में प्रकाशित लेख में अपने इस सिद्धांत को प्रतिपादित किया है।

क्राइस्ट चर्च विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक जॉन अब्राहमसन तथा जेम्स डिन्निस के द्वारा किए गए अनुसंधान अध्ययन के अनुसार बादलों की गर्जना के बाद जमीन के ऊपर कभी कभी दिखने वाले ये आग के गोले वास्तव में सिलिकॉन की ही गेंदें हैं। अर्थात् जब बादलों की टकराहट से बिजली गिरती है तब वह जमीन के अंदर पहुँच कर धरती की सतह को गर्म कर देती है। फलस्वरूप गर्म वाष्प बनती है जो धरती की सतह को गर्म कर देती है। इस तरह की प्रक्रिया में धरती का सिलिका कार्बन मिश्रण सिलिकॉन-आक्सीजन कार्बन के यौगिकों में बदल जाता है। तब सिलीकॉन के अति सूक्ष्म कण शृंखलाबद्ध होकर गर्म हवा के साथ जमीन के ऊपर आ जाते हैं तथा धीरे धीरे जलने लगते हैं। इस प्रकार से आग के गोले दिखाई देते हैं। इस प्रकार की घटना होते समय इस स्थान के तापमान में छोटे दायरे में वृद्धि हो जाती है।

वैसे आग के गोले दिखाई देने की घटना का दावा करने वाले व्यक्तियों की संख्या पूरे विश्व में एक प्रतिशत है। परंतु इसकी संतोषजनक व्याख्या भी कोई नहीं कर पाया। ये आग के गोले अधिकतर सफेद या पीले रंग के होते हैं। धरती की सतह से ऊपर लगभग 15 सेकंड तक दिखाई देते हैं।

आग के इन गोलों का प्रकाश लगभग सौ वाट के बल्ब के बराबर होता है। आग के गोलों के विषय में मध्य युग से ही चर्चा की जा रही है परंतु अब सर्वप्रथम इसकी वैज्ञानिक व्याख्या की जा रही है। वैसे वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में 'बॉल लाइटिंग' उत्पन्न करने में सफलता तो प्राप्त नहीं की है, परंतु सैद्धान्तिक आधार पर ऐसा अवश्य लगता है कि इसके रहस्य का खुलासा कर दिया है।

डॉ० शुभंकर बनर्जी

डॉ० ओझा की कृति को राष्ट्रीय पुरस्कार

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी राज्यमंत्री श्री बच्ची सिंह रावत ने 1 मई 2002 को देश के अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक डॉ० मेघनाद साहा की स्मृति में आयोजित डॉ० मेघनाद साहा मौलिक पुरस्कार योजना में डॉ० डी.डी. ओझा की कृति 'नाभिकीय ऊर्जा' को द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया। पुरस्कारस्वरूप तीस हजार रुपये की राशि, प्रशस्ति पत्र एवं स्मृति चिन्ह प्रदान किए गए। बधाई।

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम :
सबके लिए स्वास्थ्य
लेखक : डॉ0 यतीश अग्रवाल
प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली
पृष्ठ संख्या : 192,
मूल्य : रु0 75/–
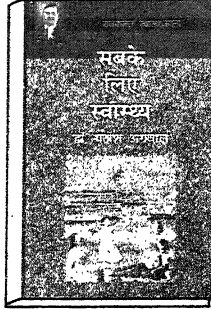
'सबके लिए स्वास्थ्य' हिन्दीभाषियों के लिए एक कारगर और अच्छी पुस्तक है। इसमें 'खिला रहे तन मन, खानपान और सेहत, पर्यावरण और स्वास्थ्य, मौसम के साथ, सफर और सेहत, और फर्स्ट एड ये छ' अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय एक कविता या सूत्र से शुरू होता है जो एक अच्छी परंपरा है। यह सत्य है कि यदि हमें अपने स्वास्थ्य को बेहतर बनाना है तो सबसे अधिक जोर प्राथमिक स्वास्थ्य पर ही देना होगा और इसके लिए स्वच्छ हवा, पानी, जमीन, भोजन और छत की जितनी जरूरत है, उतनी ही जरूरत है अज्ञान, अंधविश्वास और आडम्बरों से भरे वातावरण से निकलने की और लेखक ने इसे पूरा करने का प्रयत्न किया है।

कहीं कहीं पर लेखक आधुनिक विज्ञान की कुछ भ्रान्तियों में उलझ जाता है। पृष्ठ 28 पर लेखक विदेशों में उनके अपने परिवेश में हुई शोधकार्यों को भारत जैसे गरम देशों में हूबहू उतार देता है– जैसे 'एल्कोहल पीना'। यह सत्य है कि ठंडे देशों में शराब (एल्कोहल) तुरंत ऊर्जा देने के लिए प्रयोग की जाती है और इसलिए वह भोजन का एक आवश्यक सा अंग है, परन्तु हमारे यहाँ यह ऊर्जा न होकर नशा और अधिक नशा के लिए ही प्रयोग की जाती है। अतः शराब का कुछ भी प्रयोग वर्जित है और होना भी चाहिए। इसी तरह पृष्ठ 68 पर स्वीट ब्रेड (बछड़े के खुर) से क्या अर्थ है, स्पष्ट नहीं है। इसी तरह आयोडीन युक्त नमक के बारे में लेखक ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि अधिक मूल्य पर खरीदे गये आयोडीन युक्त नमक का प्रयोग दाल, सब्जियों में ऊपर से डालकर ही करना चाहिए क्योंकि दाल और सब्जियों को पकाते समय आयोडीन की काफी मात्रा नष्ट हो जाती है।

फर्स्ट एड का अध्याय अच्छा बना है। बिजली का करंट और सर्प दंश के बारे में विस्तृत जानकारी किताब को और अधिक लाभप्रद बना सकती थी।

वैसे पुस्तक अच्छी बनी है और डॉ0 यतीश अग्रवाल ने अपने चिकित्सकीय ज्ञान का भरपूर लाभ जन साधारण तक पहुँचाने का सफल प्रयत्न किया है। पुस्तक प्रत्येक हिन्दीभाषी के घर में रखने योग्य है।

डॉ. आर.सी. गुप्ता
78–बी, टैगोर टाउन, इलाहाबाद

पुस्तक का नाम :
मध्य हिमालय की वनौषधियाँ
लेखक : डॉ0 प्रकाश चन्द्र पंत
प्रकाशक : गोपेश प्रकाशन, विमलयूर भवन चीनाखान, अल्मोड़ा (उत्तरांचल)
संस्करण : प्रथम 2001,
पृष्ठ संख्या : 120
मूल्य : रु0 120/–

इसमें संदेह नहीं कि हिमालय का भूक्षेत्र अनेकानेक औषधीय पादपों से आच्छादित है और यहाँ की वनस्पतियों का औषधीय उपयोग अभी भी अच्छी तरह से नहीं किया जा सका है। प्रस्तुत पुस्तक काफी हद तक इस आवश्यकता की पूर्ति करती है।

पुस्तक अपने सीमित कलेवर में अत्यधिक जानकारियाँ समेटे हुए है। 'मध्य हिमालय की वनौषधियों का विस्तृत अध्ययन (7वें अध्याय) के अंतर्गत 86 वनस्पतियों के औषधीय गुणों की जानकारी दी हुई है। इसके अतिरिक्त 10 अध्याय और हैं– यथा भौगोलिक व आयुर्वेदिक परिप्रेक्ष्य में वनौषधियाँ, मुख्य रासायनिक घटक, प्राथमिक स्वास्थ्य चिकित्सा एवं दैनिक स्वास्थ्य लाभ हेतु वनौषधियाँ, वनौषधियाँ एवं पर्यावरण, सगंध पौधे व उनकी उपयोगिता, वनौषधियों का रक्षा क्षेत्र में महत्व, कुछ विवादास्पद वनौषधियाँ (सोम, नागकेशर, अमरबेल, अश्वगंधा, लक्ष्मण, इन्द्रायण, आलू, अशोक और ब्राह्मी)। परिशिष्ट–1 में आयुर्वेद में प्रचलित शब्दों के अर्थ एवं परिभाषा (संक्षेप में) और परिशिष्ट–2 के अंतर्गत महत्वपूर्ण औषधियों का स्वरूप, उपयोग एवं प्रयुक्त होने वाले भागों के विषय में अत्यंत उपयोगी साहित्य उपलब्ध है। अंतिम अध्याय संदर्भ के अंतर्गत शोधग्रन्थों व शोधपत्रों की सूची दी गई है जिसका उपयोग इस पुस्तक की रचना में किया गया है और विस्तृत जानकारी के लिए पाठकों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

कुल मिलाकर आकर्षक मुखपृष्ठ, सुन्दर छपाई, बढ़िया कागज, वनौषधियों के रेखाचित्र के कारण पुस्तक शोधार्थियों एवं चिकित्सकों के अतिरिक्त आम पाठकों के लिए अत्यंत उपयोगी है। पुस्तक के लेखक, प्रकाशक, मुद्रक, छायाकार, चित्रकार आदि सभी बधाई के पात्र हैं।

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
पूर्व संपादक 'विज्ञान' मासिक
विज्ञान परिषद् प्रयाग

पुस्तक का नाम : गृह वाटिका
लेखक : श्रीमती प्रतिभा आर्य
प्रकाशक : राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, जी–17, जगतपुरी, दिल्ली–110051
संस्करण : प्रथम 2002,
मूल्य : रु0 250/–

यह पुस्तक 172 पृष्ठों में प्रकाशित है। इसमें बारह पृष्ठों में 48 रंगीन चित्र आर्ट पेपर पर दर्शाए गए हैं, जो बड़े आकर्षक हैं। इसके आगे वाले पृष्ठों में बागवानी विषयक अनेक श्याम-श्वेत चित्र भी हैं। सभी चित्र महत्वपूर्ण जानकारियाँ दिला रहे हैं।

पुस्तक का शीर्षक देखते ही रसोई वाटिका (किचेन गार्डेन) की ओर ध्यान जाता है, जिसमें घर से जुड़े पीछे या बगल में थोड़े से स्थान में मौसमी साग–सब्जियाँ और कम स्थान घेरने और शीघ्र तैयार होने वाले केला और पपीता व अन्य फल उगाए जाते हैं, जिससे कि परिवार के सदस्यों को पौष्टिक मनचाही हरी ताजी सब्जियाँ और फल घर में ही अपने परिश्रम से उपलब्ध हो सकें।

यद्यपि फलों और सब्जियों पर कुछ सूचनाएँ उपलब्ध कराई गई हैं, परंतु इनको यदि मुख्य स्थान दिया गया होता और नौ वर्ग मीटर (100 वर्ग फीट) स्थान में इनकी खेती/बागवानी पर सूक्ष्म आवश्यक जानकारियाँ दी गई होतीं और इसके पश्चात् स्थान की उपलब्धता के अनुसार भवन के सामने वाले स्थान में मनमोहक फुलवारी लगाने का आयोजन होता, तो अति उत्तम होता। भवन से जुड़ी भूमि में गृह वाटिका/गृह बगिया/गृह उद्यान/रसोई वाटिका/रसोई उद्यान स्थापित करने में केवल इतनी ही आशा की जा सकती है।

लगता है कि इस पुस्तक में शोभाकार उद्यान/शोभाकार बागवानी/विशाल उद्यानों/धनाढ्य उद्यान व पुष्प प्रेमियों के लिए अधिकांश सामग्री उपलब्ध कराई गई है। गृह वाटिका में लगाने के लिए पीपल, नीम, गुलमोहर, सीता, अशोक, अमलताश जैसे विशाल वृक्षों की सूची भी प्रस्तुत की गई है। एक साधारण गृहस्वामी के लिए घर से जुड़ी भूमि में इस तरह का उद्यान स्थापित करना सम्भव नहीं प्रतीत होता, यद्यपि लेखिका ने 'बागवानी' के मुख्य तत्व' अध्याय में 'छोटी सी वाटिका' की ओर भी सरसरी तौर से संकेत किया है।

लेखिका ने अथक परिश्रम के साथ शोभाकार बागवानी संबंधी अपने अनुभवों का सम्पूर्ण भण्डार इस पुस्तक में खोलने का प्रयास किया है, परन्तु अभी भी

कुछ शेष रह जाता है, ऐसा लगता है। यह एक उत्तम प्रयास है। लेखिका और प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

दर्शनानन्द
अवकाश प्राप्त उपनिदेशक उद्यान
सी-67, जी.टी.बी. नगर, इलाहाबाद-16

पुस्तक का नाम :
स्वास्थ्य के 300 सवाल
लेखक : डॉ० यतीश अग्रवाल
प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण : 2000,
पृष्ठ संख्या : 188 सजिल्द **मूल्य :** रु0 195/-

हम सभी लोग स्वास्थ्य के विषय में प्रामाणिक जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं इसीलिए पत्र पत्रिकाओं में चाहे स्वास्थ्य स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित होने वाली सामग्री हो या लम्बे सचित्र लेख हों, सर्वाधिक पढ़े जाते हैं। यदि यह सामग्री या ऐसे लेख किसी ऐसे डाक्टर द्वारा लिखे जाएँ जो समाज को स्वस्थ देखना चाहता है और अपनी ओर से मानव कल्याण के लिस स्वास्थ्य के विविध पक्षों को ज़नसामान्य की भाषा में लगातार लिख रहा हो तो सोने में सुगंध समझिए। डॉ0 यतीश अग्रवाल ऐसे ही डाक्टर लेखक हैं जो हिन्दी के माध्यम से 'विज्ञान', 'विज्ञान प्रगति', 'आविष्कार' आदि लोकप्रिय पत्रिकाओं में प्रश्नोत्तर के रूप में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विषय की आधुनिकतम जानकारी अपने पाठकों को देते रहते हैं। वे अपने पाठकों के प्रति जागरूक लेखक हैं।

'स्वास्थ्य के 300 सवाल' ऐसी ही पुस्तक है जिसमें पूरे 300 सवाल उठाकर उनके प्रामाणिक उत्तर दिए गए हैं। यदि डाक्टर कोई सवाल उठाता है तो उसका अर्थ यही है कि यह रोगी या जिज्ञासु का प्रश्न है जिसका जवाब देना लाजमी है। सवाल उठाने के पीछे प्रायः जनसामान्य में व्याप्त कुछ भ्रान्त धारणायें या अविश्वास हैं जिनको दूर करना या जिनका समाधान करना आवश्यक है। यह स्वस्थ परम्परा है। डाक्टर लेखक ने इस पुस्तक में सुविचारित ढंग से सवालों को छह खंडों में विभाजित करके उनके उत्तर दिए हैं। ये खण्ड हैं– प्रमुख संक्रामक रोग, आँखों की बीमारियाँ, नाक, कान, गले के रोग, जोड़ों और हड्डियों के रोग, त्वचा के रोग तथा यौन।

इन समस्त खंडों में से अन्तिम खंड यौन अति महत्वपूर्ण है। कुमारावस्था प्राप्त करने पर चाहे लड़के हों या लड़कियाँ उनमें अजीब सी वासना जाग्रत होती है। इस खण्ड में प्रश्नोत्तर के माध्यम से दी गई जानकारी हर युवक–युवती के लिए लाभप्रद सिद्ध हो सकती है, बशर्ते वे इस प्रामाणिक पुस्तक को पढ़ें। इधर उधर की सस्ती सेक्स पुस्तकें उन्हें गलत मार्ग पर ले जा सकती हैं।

परिशिष्ट में दी गई सूचना भी काफी उपयोगी है। डाक्टर पर्चे में संकेताक्षरों से क्या लिखता है, लेबोरेट्री टेस्ट के आँकड़े क्या बताते हैं और कितनी उम्र में कितनी लम्बाई और कितना भार हो इसकी सही जानकारी प्राप्त हो सकती है।

यद्यपि पुस्तक सचित्र है किन्तु कुछ चित्र अस्पष्ट हैं। यदि चित्र रंगीन होते तो बहुत कुछ बता सकते। पुस्तक का जितना मूल्य है उसमें रंगीन चित्र दिए जा सकते थे।

पुस्तक हर एक के लिए उपयोगी है। ऐसे लोकप्रिय ग्रन्थों से हिन्दी का भण्डार भरेगा।

वर्ष 2002 की नई पत्रिकाएँ

इक्कीसवीं सदी में विज्ञान पत्रिकाओं का नया दौर शुरू हो चुका है। वर्ष 2002 में दो नई पत्रिकाएँ प्रकाश में आईं। इन पत्रिकाओं के नाम नए साँचों में ढले हुए हैं– एक का नाम 'इण्डियन जर्नल ऑफ साइंस कम्यूनिकेशन' (Vol I, Number 1, Jan-June 2002) राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्) और दूसरे का 'शुकदेव प्रसाद ऑन करंट साइंस' (विज्ञान वार्षिकी 2001–2002)। पहले की पृष्ठ संख्या 40 है और मूल्य है 150.00 रु0 तथा दूसरे की (शेष पृष्ठ 36 पर)

परिषद् का पृष्ठ

डॉ0 शिवगोपाल मिश्र का सारस्वत सम्मान एवं शिव सौरभम्' का लोकार्पण

25 मई 2002 का दिन विज्ञान परिषद् प्रयाग के इतिहास में एक स्वर्ण सोपान के रूप में समुपस्थित हुआ। इस दिन विज्ञान परिषद् के वर्तमान प्रधानमंत्री एवं हिन्दी लेखकों के पुरोधा एवं मेरे शोध प्रबन्धक आदरणीय गुरुवर 'विज्ञान भूषण' डॉ0 शिवगोपाल मिश्र जी का सारस्वत सम्मान एवं उनके गौरव के अनुरूप उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का यथार्थरूप विवरण प्रस्तुत करने वाले अनुपम ग्रन्थ 'शिव सौरभम्' का लोकार्पण हुआ।

जैसा कि सुविदित है डॉ0 शिवगोपाल मिश्र एक सुयोग्य एवं सफल मृदा विज्ञानी ही नहीं बल्कि एक उच्च कोटि के शोधकर्ता, शोध प्रबन्धक, वार्ताकार, सम्पादक, अनुवादक, लेखक अर्थात् एक बहुआयामी विज्ञानसेवी प्रोफेसर रहे हैं। उनके द्वारा सम्पादित 'भारत की सम्पदा' एक अमूल्य निधि है। हिन्दी भाषा में विज्ञान लेखन को प्रोत्साहन देने वाले और उसके लिए सतत् तपस्यारत रहने वाले डॉ0 मिश्र विज्ञान और साहित्य के संगम के साथ ही लोक सेतु भी हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन और व्यक्तित्व हिन्दी में विज्ञान लेखन को समर्पित रहा है।

समारोह का आरंभ प्रो0 वी.डी. गुप्त द्वारा सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण तथा दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल' ने सरस्वती वन्दना प्रस्तुत की। तत्पश्चात् कार्यक्रम के संचालक देवव्रत द्विवेदी ने आमन्त्रित अतिथियों का स्वागत किया। डॉ0 अशोक कुमार गुप्ता, डॉ0 सुनील कुमार पाण्डेय, श्री उमेश कुमार शुक्ल, श्री प्रमोद कुमार मिश्र तथा कु0 हेमलता पन्त ने मंचासीन विशिष्ट अतिथियों का माल्यार्पण किया। अभिनन्दन ग्रन्थ 'शिव सौरभम्' के सम्पादक डॉ0 गिरीश पाण्डेय ने ग्रन्थ के प्रकाशन तथा सारस्वत सम्मान समारोह के आयोजन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला। डॉ0 सुनील कुमार पाण्डेय ने इस अवसर पर प्राप्त अनेक विशिष्ट जनों के शुभकामना संदेशों का वाचन किया। डॉ0 अशोक कुमार गुप्ता ने डॉ0 मिश्र का संक्षिप्त जीवन परिचय प्रस्तुत किया। इसके पश्चात् प्रो0 वी.डी. गुप्त के कर कमलों से डॉ0 शिवगोपाल मिश्र जी का सारस्वत सम्मान किया गया और उन्हें अंगवस्त्रम तथा नारियल भेंट किया गया। तत्पश्चात् प्रो0 वी.डी. गुप्ता ने 'शिव सौरभम्' का लोकार्पण किया। डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल' ने डॉ0 मिश्र के सम्मान में स्वरचित अभिनन्दन गीत की प्रस्तुति की। इसके बाद आमन्त्रित अतिथियों ने डॉ0 मिश्र के प्रति अपनी भावनायें तथा शुभकामनायें व्यक्त कीं। इसी क्रम में समारोह के अन्त में डॉ0 मिश्र के शिष्यों की ओर से वाग्देवी की एक प्रतिमा उन्हें स्मृति चिन्ह के रूप में भेंट की गई। लोकार्पित ग्रन्थ 'शिव सौरभम' का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करना समीचीन होगा।

ग्रन्थ का नाम : शिव सौरभम् (डॉ0 शिवगोपाल मिश्र की 70वीं वर्षगांठ पर अभिनन्दन)

सम्पादक : डॉ0 गिरीश पाण्डेय, डॉ सुनील कुमार पाण्डेय

प्रकाशक : विज्ञान परिषद् प्रयाग (फैजाबाद शाखा), मुद्रक : नागरी प्रेस इलाहाबाद, सचित्र, सजिल्द, पृष्ठ संख्या : 330, प्रकाशन वर्ष 2002।

यह ग्रन्थ वृहद् आकार का 300 से अधिक पृष्ठों का एक अत्यन्त आकर्षक साज सज्जायुक्त है। इस भव्य सजिल्द ग्रन्थ के मुखपृष्ठ पर ही डॉ0 मिश्र जी का एक आकर्षक चित्र सहज ही मन को आकर्षित करता है। ग्रन्थ के प्रारंभ में सम्पादक ने अपनी बात,

डॉ0 मिश्र की संक्षिप्त जीवन रेखा, डॉ0 मुरली मनोहर जोशी, श्रीमती मंजु शर्मा एवं नर्मदा गोस्वामी के सन्देश तथा डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल' द्वारा विरचित अभिनन्दन गीत प्रस्तुत है। तत्पश्चात् व्यक्तित्व खण्ड में 90 लेख हिन्दी में तथा 6 लेख अंग्रेजी में प्रस्तुत हैं। इसके बाद डॉ0 मिश्र ने स्वयं आपबीती– क्या कहूँ क्या न कहूँ– लेख के माध्यम से अपने उद्‌गार व्यक्त किए हैं। इसी क्रम में उनकी पत्नी तथा बेटियों के हिन्दी में और उनके सुपुत्र डॉ0 आशुतोष मिश्र का लेख अंग्रेजी में प्रस्तुत है। कृतित्व खण्ड में 22 लेख हैं जो डॉ0 मिश्र की साहित्यिक एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों पर विस्तृत प्रकाश डालते हैं। इसमें डॉ0 मिश्र की वैज्ञानिक कृतियों, साहित्यिक कृतियों, सम्मानों, डॉ0 मिश्र द्वारा रचित अंग्रेजी पुस्तकों, लोक विज्ञान से संबंधित उनकी पुस्तकें, लेख एवं वार्ताओं उनके सम्पादन, उनकी चुनौती स्वीकार करने की क्षमताओं, उनके विज्ञान लोकप्रियकरण के अथक सत्प्रयासों, उनके शोध प्रबन्ध, विज्ञान विषयक लेख, साहित्यिक अवदान, कृतियों, रचनाओं एवं लेखन उनके अलभ्य काव्य ग्रन्थों के उद्धारक के रूप में सत्प्रयासों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत है। सबसे बढ़कर भक्ति वेदान्त ट्रस्ट की अंग्रेजी पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद उनकी गौरव गाथा का जीवन्त उदाहरण है। संपूर्ण रूप से यह अनुपम ग्रन्थ एक उत्कृष्ट रचना है जिसकी छपाई उत्तम तथा आकर्षक है। ग्रन्थ में 28 रंगीन तथा 24 श्वेत श्याम चित्र डॉ0 मिश्र के जीवन के सोपान एवं उनकी विशिष्ट उपलब्धियों एवं सम्मानों तथा पारिवारिक जीवन की सजीव झाँकी प्रस्तुत करते हैं। निश्चय ही यह ग्रन्थ एक उत्कृष्ट उपलब्धि है और प्रत्येक दृष्टि से प्रशंसनीय एवं संग्रहणीय है।

ग्रन्थ के लोकार्पण समारोह के अवसर पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो0 वी.डी. गुप्त जी लखनऊ से, उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय, विज्ञान परिषद् प्रयाग के उपसभापति प्रो0 चन्द्रिका प्रसाद तथा प्रो0 पी.सी. गुप्त, नेशनल अकादमी ऑफ साइन्स के जनरल सेक्रेटरी प्रो0 हरीश चन्द्र खरे उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त डॉ0 रमेश दत्त शर्मा, श्री तुरशन पाल पाठक, श्री श्याम सुन्दर शर्मा, डॉ0 सुबोध महत्नी, डॉ0 हरि कृष्ण देवसरे (सभी नई दिल्ली) डॉ0 विष्णु दत्त शर्मा (गाजियाबाद) डॉ0 के.एन. तिवारी (गुड़गाँव), डॉ0 श्रवण कुमार तिवारी, डॉ0 डी.के. राय, डॉ0 बी.डी. सिंह, डॉ0 रमेश चन्द्र तिवारी (वाराणसी), डॉ0 किशोरी लाल गुप्त (भदोही), डॉ0 राजीव रंजन उपाध्याय, डॉ0 गिरीश पाण्डेय (संत कबीर नगर) उपस्थित थे। इनके अतिरिक्त इलाहाबाद के डॉ0 मिश्र के अनेक मित्र, सहयोगी, शिष्यगण तथा पारिवारिक जन एवं संबंधी भी कार्यक्रम की शोभा बढ़ा रहे थे। स्थानीय आकाशवाणी, दूरदर्शन केन्द्र तथा समाचारपत्रों के प्रतिनिधि भी कार्यक्रम में उपस्थित थे।

डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल'
439ए, बासुकी खुर्द
दारागंज, इलाहाबाद-6

विश्व तम्बाकू निषेध दिवस पर संगोष्ठी सम्पन्न

31 मई 2002 को विज्ञान परिषद् प्रयाग के तत्वावधान में विश्व तम्बाकू निषेध दिवस के अवसर पर एक संगोष्ठी आयोजित की गई जिसकी अध्यक्षता श्री दर्शनान्द (अवकाशप्राप्त उपनिदेशक 'उद्यान' इलाहाबाद मंडल) ने की। इस अवसर पर श्री दर्शनानन्द के अतिरिक्त डॉ0 ईश्वर चन्द्र शुक्ल, डॉ0 भुवनेश्वर सिंह गहलौत, डॉ0 शिवगोपाल मिश्र, डॉ0 आर.सी. गुप्ता, डॉ0 अरविंद मिश्र, श्री प्रेमचंद्र श्रीवास्तव, श्री उमेश कुमार शुक्ल आदि वक्ताओं ने धूम्रपान व नशे के दुष्प्रभावों के बारे में बताया तथा नशे की बढ़ती प्रवृत्ति पर चिंता व्यक्त की। गोष्ठी का संचालन देवव्रत द्विवेदी ने किया।

विश्व पर्यावरण दिवस पर गोष्ठी सम्पन्न

विज्ञान परिषद् प्रयाग के तत्वावधान में 5 जून 2002 को विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता डॉ0 ईश्वर चन्द्र शुक्ल, पूर्व अध्यक्ष, रसायन विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने की।

डॉ0 शुक्ल ने अपने उद्बोधन में पृथ्वी पर पर्यावरण के विकृत होते जा रहे स्वरूप पर गहरी चिंता व्यक्त करते हुए आह्वान किया कि प्रकृति के संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग ही हमें इस संकट से उबार सकता है। हमें अपनी आवश्यकताओं को सीमित करते हुए भूमि, जल तथा वायु के प्रदूषण को नियंत्रित करने में योगदान करना चाहिए।

गोष्ठी के आरंभ में संचालक देवव्रत द्विवेदी ने अतिथियों का स्वागत किया। 'विज्ञान' मासिक के पर्यावरण अंक का लोकार्पण श्री दर्शनान्द के द्वारा किया गया। परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ0 शिवगोपाल मिश्र ने विज्ञान परिषद् द्वारा पर्यावरण संबंधी जनजागृति के लिए किए गए कार्यों के बारे में जानकारी दी। डॉ0 अरविन्द मिश्र ने वैदिक साहित्य में पर्यावरण संरक्षण के बारे में प्राप्त विचारों का उद्धरण देते हुए प्राच्य तथा पाश्चात्य संस्कृति के अंतर को प्रदूषण का प्रमुख कारण बताया। डॉ0 आशुतोष मिश्र ने पश्चिमी देशों द्वारा पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने के लिए किए जा रहे शोध कार्यों तथा प्रयासों की जानकारी दी तथा यह भी कहा कि ऐसे शोधों के लिए लगने वाले अपार धन का बोझ उठाना विकासशील देशों के लिए संभव नहीं है। डॉ0 सुप्रभात मुखर्जी ने विद्यार्थियों में पर्यावरण सरंक्षण के प्रति जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता बताई। डॉ0 आर.सी. गुप्त ने अस्पतालों के कारण होने वाले प्रदूषण के बारे में बताया। श्री दर्शनानन्द ने वाहनों तथा जेनरेटरों से हो रहे वायु तथा ध्वनि प्रदूषण पर चिंता व्यक्त की। श्री देवव्रत द्विवेदी ने पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपनी चिंता कविता के माध्यम से व्यक्त की।

इस अवसर पर डॉ0 विनोद कुमार गुप्त, श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव, डॉ0 पृथ्वीनाथ पाण्डेय, श्री डी.एम. श्रीवास्तव, श्री उमेश कुमार शुक्ल, श्री बलराम यादव तथा श्री बृजेन्द्र दुबे ने भी अपने विचार व्यक्त किए। गोष्ठी में श्री एम.पी. यादव, चन्द्रभान सिंह, नरेन्द्र सिंह, राकेश यादव एवं रमेश आदि श्रोतागण भी उपस्थित थे।

देवव्रत द्विवेदी

पृष्ठ 32 का शेष

पृष्ठ संख्या 36 है और मूल्य है 30.00 रु0। पहली पत्रिका विज्ञान संचार को समर्पित है। इसके सारे लेख (एक को छोड़कर) अंग्रेजी में हैं। कुछेक के सारांश हिन्दी में भी दिए हुए हैं। इन लेखों में डॉ0 आर.डी. शर्मा, डॉ0 मनोज पटैरिया और डॉ0 नार्लिकर के लेख अत्यन्त सूचनाप्रद हैं। ध्यान देने की बात है कि अंग्रेजी में साइन्स कम्यूनिकेशन पर पहले से ही प्रचुर सामग्री उपलब्ध है अतः भारत सरकार के विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा इस पत्रिका को अंग्रेजी में निकालना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता। यदि यह पत्रिका पूर्णतया हिन्दी में निकलती तो शायद ज्यादा लाभप्रद होती। इस प्रथम अंक में हिन्दी को अत्यन्त स्थान मिला है, जो चिन्तनीय है। हम चाहेंगे कि भविष्य में इस पत्रिका का कलेवर बढ़े और हिन्दी का पर्याप्त प्रतिनिधित्व रहे।

दूसरी पत्रिका व्यक्तिगत प्रयास का परिणाम है। यह आत्मकेन्द्रित पत्रिका है जिसकी सारी सामग्री एक ही लेखक द्वारा लिखी गई है। सम्भवतः इसीलिए इसका नाम शुकदेव प्रसाद आन करंट साइंस रखा गया है। यह अन्य पत्रिकाओं से हटकर है क्योंकि इसमें सामयिक विज्ञान चर्चा को ही स्थान दिया गया है। यह एक विशेष वर्ग के प्रतियोगिता में भाग लेने वाले छात्रों को लक्ष्य में रखकर निकाली गई है। यह आम लोगों के लिए नहीं है। अतः इसकी सामग्री के बारे में कुछ कहना व्यर्थ है। यह उन तमाम प्रतियोगी परीक्षाओं को दृष्टि में रखकर छपने वाली पत्रिकाओं की शृंखला में एक नई कड़ी है जो बुकस्टालों पर उपलब्ध हैं। हाँ, इसका कवर पृष्ठ उतना आकर्षक नहीं है, इसलिए शायद प्रतियोगिता परीक्षार्थी आकृष्ट न हों किन्तु इसमें जो सामग्री दी गई है वह शिक्षण के अनुभव के आधार पर दी गई है और किसी विशेष परीक्षा के प्रश्नपत्र की पूर्ति कराने वाली है।

ऐसी नई नई पत्रिकाओं के प्रकाशन से आशा बँधने लगी है कि इक्कीसवीं सदी इन्टरनेट की नहीं अपितु मुद्रित सामग्री की सदी होगी।

शिवगोपाल मिश्र
विज्ञान परिषद् प्रयाग

भारत सरकार

महासागर विकास विभाग

महासागर विकास विभाग पुरस्कार योजना वर्ष 2002

हिन्दी में मौलिक पुस्तक लेखन के लिए पुरस्कार

महासागर विकास विभाग वर्ष 2002 में हिन्दी में मौलिक लेखन को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से समुद्र विज्ञान से संबंधित विषयों अर्थात 1. समुद्र के सजीव तथा निर्जीव संसाधन 2. गहरे समुद्र संस्तर से बहुधात्विक पिंडिकाएं 3. अंटार्कटिक अनुसंधान 4. समुद्री पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण 5. तरंग ऊर्जा का इस्तेमाल और समुद्र तापीय ऊर्जा रूपांतरण तथा 6. समुद्र विज्ञान से संबंधित किसी अन्य विषय पर मूल रूप से हिन्दी में लिखी गई वैज्ञानिक पुस्तकें (प्रकाशित अथवा पांडुलिपि) आमंत्रित करता है।

महासागर विकास विभाग के कर्मचारियों को छोड़कर सभी भारतीय नागरिक इस योजना में भाग ले सकते हैं।

इस योजना में तीन पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं :

प्रथम पुरस्कार	20,000 रुपए
द्वितीय पुरस्कार	15,000 रुपए
तृतीय पुरस्कार	10,000 रुपए

इस योजना के अन्तर्गत पुरस्कार वर्ष पिछले तीन वर्षों के दौरान लिखी गई पांडुलिपियों तथा प्रकाशित पुस्तकों पर ही विचार किया जाएगा। पांडुलिपि के साथ लेखक की इस आशय की वचनबद्धता होनी आवश्यक है कि यदि पांडुलिपि को पुरस्कार के लिए चुन लिया जाता है तो पुरस्कार की घोषणा की तिथि के छः महीने के अंदर उस पांडुलिपि को प्रकाशित करवा लिया जाएगा। प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु पिछले वर्षों के दौरान भेजी गई पांडुलिपियों/पुस्तकों पर विचार नहीं किया जाएगा। आवेदन के साथ पांडुलिपियों/पुस्तकों की पांच प्रतियां भेजना आवश्यक है। इस प्रतियोगिता के लिए आवेदन पत्र तथा योजना के निबंधन और शर्तों से संबंधित विस्तृत सूचना डाक द्वारा या व्यक्तिगत रूप से सहायक निदेशक (राजभाषा), महासागर विकास विभाग, महासागर भवन, ब्लाक–12, लोदी रोड, केंद्रीय कार्यालय परिसर, नई दिल्ली–110003 (दूरभाष – 4362820) से प्राप्त की जा सकती है। यह सूचना विभाग की वेबसाइट www.dod.nic.in पर भी उपलब्ध है।

31 अगस्त 2002 के बाद प्राप्त होने वाली पुस्तकों/पांडुलिपियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

उद्योग जगत में लेसर

डा० डी. डी. ओझा

ज्ञान की दुनिया में 7 जुलाई 1960 को एक ऐसे नए आविष्कार की घोषणा हुई जिसने विश्व में तहलका मचा दिया। यह घोषणा थी 'लेसर किरण' के आविष्कार की। वस्तुतः विज्ञान एवं तकनीकी के इतिहास में लेसर का आविष्कार एक महत्वपूर्ण और महानतम आविष्कार सिद्ध हुआ है। विगत 42 वर्षों में अपने विशेष और विचित्र गुणों के कारण विभिन्न प्रकार की लेसर किरणें विज्ञान, इंजीनियरी, आयुर्विज्ञान, जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान के अलावा रक्षा उद्योगों, संचार व्यवस्थाओं, कम्प्यूटरों आदि के अनेक क्षेत्रों में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं। शायद ही जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र बचा होगा जिसमें लेसर किरणें प्रयोग में न लाई जा रही हों।

वस्तुतः लेसर किरणें हैं तो एक प्रकार की पारदर्शी प्रकाश किरणें, परंतु ये साधारण प्रकाश से भिन्न होती हैं। किसी भी लेसर किरण में केवल एक ही रंग (एक ही तरंग दैर्घ्य) होता है। लेसर किरणों की चमक और तीव्रता बहुत अधिक होती है। सभी लेसर किरणें एक प्रकार की विद्युतचुंबकीय तरंगें होती हैं और उनमें विद्युतचुंबकीय तरंगों के गुण होते हैं। ये प्रकाश के वेग से चलती हैं।

लेसर शब्द की उत्पत्ति उस क्रिया के प्रथम अक्षरों को लेकर हुई है जिससे ये किरणें उत्पन्न होती हैं। लेसर का पूरा नाम है 'लाइट एंप्लीफिकेशन बाइ स्टिम्युलेटेड एमिशन ऑफ रेडिएशन' (Light Amplification by Stimulated emission of Radiation)। इस क्रिया के प्रत्येक शब्द के प्रथम अक्षर को लेकर लेसर (Laser) शब्द निर्मित किया गया है। इस क्रिया को भी 'लेसर' कहते हैं और इस किरण को पैदा करने वाले स्रोत को भी लेसर ही कहते हैं।

विश्व का प्रथम लेसर रूबी लेसर था। इसका निर्माण 7 जुलाइ सन् 1960 म हूज रिसच लबारटरा अमेरिका में कार्यरत डॉ0 टी.एच. मेमेन नामक वैज्ञानिक ने किया था। लेसर किरणों को प्रयोग में लाकर आज ऐसे काम होने लगे हैं जो कभी असम्भव जान पड़ते थे। इन किरणों की सहायता से मोतियाबिंद का आपरेशन एक सेकेंड के हजारवें भाग में ही किया जा सकता है। आँख के अपने स्थान से हटे हुए रेटिना को पल भर में यथास्थान जोड़ा जा सकता है। इस शल्य चिकित्सा प्रणाली का विश्व में लाखों रोगी लाभ उठा चुके हैं। इन किरणों की सहायता से बिना चीर फाड़ किए गुर्दे की पथरी को शरीर से बाहर निकाला जा सकता है। इसी प्रकार हृदय की धमनियों की रुकावट को लेसर किरण द्वारा पल भर में ही दूर किया जा सकता है।

उद्योगों में लेसर किरणों ने नई पद्धतियों को जन्म दिया है :

1. लेसर द्वारा सूक्ष्म छेद करना : कार्बन डाई आक्साइड, एक्साइमर, नियोडियम और ग्लास से प्राप्त होने वाली लेसर किरणों को लेंसों द्वारा फोकस करके धातुओं, सिरैमिकों और काँच में ऐसे सूक्ष्म छेद किए जा सकते हैं जिनका व्यास बहुत ही कम होता है। मशीनी ड्रिलों से इतने सूक्ष्म छेद करना प्रायः असंभव है।

लेसर के आविष्कार के बाद सबसे पहले हीरा जैसे कठोर पदार्थ में छेद किया गया था। हीरे से बनी डाइयों का प्रयोग तार खींचने में किया जाता है। गोवा में ऐसी डाइयाँ लेसर किरणों द्वारा बनाई जा रही हैं। लेसर से छेद करने का सबसे बड़ा फायदा यह है कि अधिक सत्यता के साथ वांछित दिशा में तथा आसपास भी छेद किए जा सकते हैं।

2. लेसर द्वारा वेल्डिंग : ठोस अवस्था और गैस लेसरों को धातुओं और अर्द्धचालक अवयवों को वेल्ड करने में ऊँचे पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। वेल्डिंग कार्यों में भी मुख्यतः याग (YAG) और कार्बन डाइआक्साइड लेसरों का प्रयोग किया जाता है। लेसर वेल्डिंग किसी भी तरीके से आर्क वेल्डिंग, रेजिस्टेंस वेल्डिंग और इलेक्ट्रान बीम वेल्डिंग से कम नहीं है। लेसर वेल्डिंग का सबसे अधिक प्रयोग सूक्ष्म इलेक्ट्रानिकी में हुआ है, जहाँ अत्यधिक छोटे छोटे घटकों को वेल्ड किया जाता है। लेसर वेल्डिंग हवाई जहाजों और टरबाइनों के निर्माण में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। लेसर द्वारा समान एवं असमान धातुओं को जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार लेसर किरणों से अब तक 40 से भी अधिक धातुओं को जोड़कर देखा जा चुका है। आजकल ऐसे लेसर वेल्डिंग संयंत्र विकसित हो चुके हैं जिनके द्वारा जलयान निर्माण में टाइटेनियम और ऐल्युमिनियम जैसी धातुओं को वेल्ड किया जा सकता है। लेसर किरणों द्वारा अधातुओं और सामान्य ग्लासों को भी जोड़ा जा सकता है तथा चुंबकीय पदार्थों की भी वेल्डिंग बिना चुम्बकत्व नष्ट किए की जा सकती है।

3. लेसर द्वारा पदार्थों की कटाई : लेसर किरणों द्वारा धातुओं, कागज, कपड़ा, प्लाईवुड, ग्लास, ऐस्बेस्टस, सिरैमिक, चमड़ा आदि अनेक पदार्थों की कटाई की जा सकती है। कटाई संयंत्रों में सामान्यतः अधिक शक्तिवाले कार्बन डाइआक्साइड लेसर प्रयोग किए जाते हैं। लेसर से बहुत ही बारीक और उत्तम कटाई होती है। इससे दो और तीन विमाओं की कटाई की जा सकती है। लेसर की कटाई क्रिया बहुत ही तीव्र होती है एवं कटाई वाले स्थान पर बहुत ही कम उष्मीय प्रभाव होते हैं।

गारमेंट फैक्ट्रियों में, जहाँ एक ही प्रकार के बहुत से कपड़ों का निर्माण होता है, वहाँ पर लेसर द्वारा ही कटाई की जाती है। लेसर कटाई संयंत्र से एक घंटे में 50 सूत काटे जा सकते हैं।

4. लेसर द्वारा उष्मीय उपचार : कार्बन डाइआक्साइड लेसर किरणों को धातुओं के उष्मीय उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। उष्मीय उपचार से धातुओं की कठोरता बढ़ जाती है। जब लेसर किरण धातु से बने किसी घटक की सतह पर डाली जाती है तो वह सतह तेजी से गरम हो जाती है। जब लेसर किरण को उस स्थान से हटाया जाता है तो वह तेजी से ठंडी हो जाती है। इससे धातु की कठोरता बढ़ जाती है। लेसर किरणों को प्रयोग में लाकर ऑटोमोबाइल के घटकों को कठोरता प्रदान की जा सकती है। इन किरणों की सहायता से धातुओं की सतह के दूसरे गुण भी बदले जा सकते हैं। आजकल वायुयान के कल पुर्जों को चमकाने के लिए लेसरों का प्रयोग किया जा रहा है।

5. अन्य उपयोग : लेसर किरणों की सहायता से अर्द्धचालकों का अनीलन किया जा सकता है। इसके लिए सतत किरण और स्पंद लेसर दोनों ही प्रयोग किए जा रहे हैं। सामान्यतः इस कार्य के लिए रूबी, याग (YAG), एक्साइमर और आर्गन लेसर प्रयोग में लाए जाते हैं।

लेसर किरणों की सहायता से बहुमूल्य पत्थरों का रंग भी बदला जा सकता है। कलाई घड़ियों में लगने वाले ज्वेल भी लेसर संयंत्रों की सहायता से बनाए जाने लगे हैं। इन किरणों को इंटिग्रेटेड सर्किट बनाने में भी प्रयोग किया जा रहा है। मोती उद्योग में भी सीप को लेसर द्वारा खोलकर मोती निकालने का काम किया जाने लगा है।

लेसर की उचित तरंग दैर्घ्य का चयन करके वायुयानों और मोटरकारों का पेंट उतारा जा सकता है। इसी प्रकार इन किरणों की सहायता से धातुओं की चादरों को मनचाहे रूप और आकार में काटा जा सकता है। इस कार्य के लिए लेसर शेपर बाजार में उपलब्ध है।

लेसर और कम्प्यूटर की सहायता से मनचाहे अक्षरों एवं संख्याओं को इलेक्ट्रानिक घटकों और धातु की चादरों के ऊपर एनग्रेव किया जा सकता है।

'गरूकृपा', ब्रह्मपुरी
हजारी चबूतरा, जोधपुर

डी. एन. ए. पट्टिकाएं....(पृष्ठ 16 का शेष)

साथ अथवा उसकी पैकिंग के साथ किया जा सकता है। इस डीएनए पट्टिका को रंध्रीय सेलूलोज के साथ मिलाया जा सकता है एवं इसके ऊपर किसी पन्नी को चढ़ाकर ढका जा सकता है।

इन सबमें सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि इन अणुओं के टुकड़ों को नंगी आँखों से नहीं देखा जा सकता है। एक विशेष तकनीक के उपयोग के द्वारा डीएनए अणुओं में उपलब्ध सूचना को पढ़ा जा सकता है।

किसी कुण्डली की तस्वीर का ध्यान करें। किसी जीवित जीव में संश्लेषित डीएनए अणुपूरक रज्जुक द्वारा पूरित होते हैं। (जैसे ग्वानीन के सम्मुख रज्जुक पर ऐडिनीन का पाया जाना) दोनों लड़ों के संकरण से प्रस्फुरण संकेत उत्पन्न होते हैं तथा जिसे विशेष तकनीक के माध्यम से पढ़ा जा सकता है। एक प्रेक्षण कलम एवं सस्ती लाल लेसर का विकास ही इस विशेष प्रेक्षण तकनीकी का अंग है जो कि नवम्बर ए0जी0 एवं सीमेन्स कम्पनी ने मिलकर विकसित किया है।

सवाल यह उठता है कि क्या आम उपभोक्ता उत्पादों के लिए इतनी संवेदनशीलता एवं उच्च तकनीकी वाली पट्टिका बहुत ही संवेदनशील एवं खर्चीली नहीं है ? नहीं, ऐसा कदापि नहीं है। पट्टीकरण एवं प्रेक्षण बहुत ही साधारण प्रक्रिया है। इसकी कीमत 5 सेन्ट प्रति पट्टिका है। ये प्रेक्षण उपकरण 1500 यूरो के मूल्य के हैं।

आज के इस आपाधापी के युग में जहाँ पर कापीराइट एवं पेटेन्टों की चोरी करने वालों एवं जालसाजों की भरमार होने के कारण अत्यधिक नुकसान की समस्या हो, इस बात का आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि नवम्बर ए0जी0 संसार में एक बहुत ही बड़े व्यापार की क्षमता रखता है। ऐसी उम्मीद है कि बायोटेक पट्टिका की व्यापार क्षमता बहुत शीघ्र ही लगभग 50 मिलियन यूरो प्रतिवर्ष होने वाली है।

अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व के सम्पूर्ण व्यापार के 5–8 प्रतिशत उत्पादों का नुकसान चोरी के कारण होता है। धोखाधड़ी युक्त सामानों की लगभग 60–100 US $ की बिक्री पूरे विश्व में प्रतिवर्ष होती है।

इन जालसाजों की गिरफ्त में यूरोपीय देशों के अतिरिक्त भारत भी पूरी तरह से जकड़ा हुआ है। नवम्बर ए0जी0 क्लस्टर Identification System पर कार्य कर रहा है। इसकी योजना धातु में ऐसे क्लस्टर्स तैयार करने की है जिसमें लगभग 15 नैनोमीटर की आणविक पट्टिकाएँ होंगी। इन अणुओं का कार्य उत्पादों की सतह पर जालसाजी युक्त रंगों की छाया उत्पन्न करना है। इस छाया की नकल प्रतिलिपि बनाना असम्भव है। यह विधि बिलों की सुरक्षा, क्रेडिट कार्डों की सुरक्षा एवं अतिआवश्यक दस्तावेजों की सुरक्षा के लिए अति उपयोगी है। इस विधि से पारम्परिक होलोग्राम विधि की अपेक्षा उपर्युक्त वस्तुओं को अधिक अच्छी तरह सुरक्षित किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में दो बातें उल्लेखनीय हैं :

1. डीएनए अणुओं का उपयोग इतनी कम मात्रा में किया जाता है कि विश्लेषण प्रेक्षण असम्भव है।

2. अपने समान डीएनए कणों में ही डीएनए पट्टिका अणु छिपे होते हैं। किसी सतह से जुड़े हुए डीएनए कणों को बिना नष्ट किए अलग नहीं किया जा सकता है।

शोध छात्र, भौतिकी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

धरती को एक मौका दें

• प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

5 जून को प्रतिवर्ष 'विश्व पर्यावरण दिवस' दुनिया के सभी देशों में अलग अलग तरह से मनाया जाता है। वास्तव में यह दिवस आपके लिए, मेरे लिए, हम सबके लिए है। 'विश्व पर्यावरण दिवस' जनसाधारण की घटना है। पर्यावरण के प्रति जनजागरण के लिए इस दिन अनेक प्रकार के कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। सड़क रैली, साइकिल जुलूस, संगीत समारोह, नुक्कड़ नाटक, निबंध लेखन और पोस्टर प्रतियोगिता, वृक्षारोपण, कूड़े की सफाई जैसे अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से हम पर्यावरण को साफ सुथरा रखने का संकल्प लेते हैं। यहाँ विज्ञान परिषद् में हम लोग व्याख्यानों, संगोष्ठियों और आलेखों के माध्यम से पिछले अनेक वर्षों से, जो भी बन पड़ता है, करते जा रहे हैं।

पिछले दो दशकों में विज्ञान परिषद् में पर्यावरण से संबंधित अनेक राष्ट्रीय स्तर की गोष्ठियाँ आयोजित की गईं और इतना विपुल उच्चस्तरीय साहित्य सृजित किया गया कि श्रद्धेय स्व0 स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती ने मुझसे कहा "पर्यावरण का प्रकरण अब बंद कर दो। पर्यावरण का विनाश सभ्यता की प्रगति से जुड़ा हुआ है। विकास होगा तो पर्यावरण को निश्चित रूप से क्षति पहुँचेगी।" मैं उस समय 'विज्ञान' पत्रिका का सम्पादक था और संभवतः जीव विज्ञान का विद्यार्थी होने के नाते इस विषय में मेरी गहरी रुचि थी। किन्तु सच्चाई से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता है। अभी भी पर्यावरण को बचाने और सुधारने के लिए जनजागरण की आवश्यकता है।

विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर हर वर्ष किसी न किसी मुख्य विषय का चुनाव करके सारे संसार में उसी पर विचार विमर्श होता है। इस वर्ष का मुख्य विषय है 'धरती को एक मौका दें'।

यूनाइटेड नेशन्स इनवायरनमेंटल प्रोग्राम (यूनेप) के तहत इस वर्ष चीन के शेनजेन शहर में यह कार्यक्रम आयोजित है।

मोटे तौर पर कार्यसूची (एजेण्डा) में पर्यावरणीय मुद्दों को मानवीय स्वरूप प्रदान करना, लोगों को अधिकार देना ताकि वे सक्रिय टिकाऊ और न्यायसंगत विकास को गति दे सकें, लोगों में ऐसी सूझबूझ पैदा करना ताकि समुदाय बदलते हुए पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति निर्णायक भूमिका निभा सकें और ऐसी साझेदारी की हिमायत (समर्थन) कर सकें जो सभी राष्ट्रों, सभी लोगों के अधिक सुरक्षित भविष्य की कल्पना साकार कर सके।

मैं आशा करता हूँ कि युवा पीढ़ी पर्यावरण को नष्ट करने की हमारी पीढ़ी की नकल न करके आज के दिन स्वस्थ पर्यावरण के निर्माण का संकल्प लेगी। याद रहे धरती हमें हमारे पूर्वजों से मिली है। यह आने वाली पीढ़ियों की थाती है। हमें इसे उन्हें सुरक्षित सौंपना है।

पर्यावरण दिवस के मुख्य विषय

वर्ष	विषय
1990	बच्चे और पर्यावरण
1991	मौसम परिवर्तन : विश्वव्यापी साझेदारी की आवश्यकता
1992	केवल एक धरती, जिम्मेवार और साझीदार रहें
1993	गरीबी और पर्यावरण : अनैतिक घरों को तोड़ना
1994	एक धरती एक कुटुम्ब
1995	हम लोग : धरती के पर्यावरण के लिए एक हों
1996	हमारी धरती, हमारा प्राकृतिक वास, हमारा घर
1997	धरती पर जीवन के लिए
1998	धरती पर जीवन के लिए सागरों को बचाएँ
1999	हमारी धरती, हमारा भविष्य : बस इसे बचाएँ
2000	सहस्राब्दि का पर्यावरण : कुछ करने का समय
2001	विश्वव्यापी जीवन जाल से जुड़ें
2002	धरती को एक मौका दें

यमुना II सी, 115/6
त्रिवेणीपुरम, झूँसी, इलाहाबाद

प्रथम प्रवीण शर्मा स्मृति
सूचना प्रौद्योगिकी पुरस्कार

विज्ञान परिषद् प्रयाग के
प्रथम प्रवीण शर्मा स्मृति
सूचना प्रौद्योगिकी पुरस्कार हेतु
मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
द्वारा प्रकाशित
शशि शुक्ला की पुस्तक 'इन्टरनेट'
का चयन किया गया है।
लेखक तथा प्रकाशक को बधाइयाँ

- संपादक

विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री डा. शिवगोपाल मिश्र का सारस्वत सम्मान करते प्रो. वी. डी. गुप्त, साथ में देवव्रत द्विवेदी और डा. सुनील कुमार पाण्डेय

डा. शिवगोपाल मिश्र को स्मृति चिन्ह भेंट करते हुए डा. गिरीश पाण्डेय, डा. सुनील कुमार पाण्डेय, देवव्रत द्विवेदी और डा. रमेश चन्द्र तिवारी

'शिव सौरभम्' के लोकार्पण के अवसर पर : बाँए से - देवव्रत द्विवेदी, डा. सुनील कुमार पाण्डेय, डा. रमेश चन्द्र तिवारी, डा. के.बी. पाण्डे डा. श्रीमती रामकुमारी मिश्र, डा. शिवगोपाल मिश्र, डा. चन्द्रिका प्रसाद, डा. हरिश्चंद्र खरे, डा. बी.डी. गुप्त तथा डा. गिरीश पाण्डेय